श्रीललिता-सप्तशती

'तीन कूटों' से सम्पुटित
'श्रीदुर्गा-सप्तशती'

५०/-

प्रकाशक : परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

उपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य
अद्भुत दुर्गा सप्तशती	१००)
अलोप-शङ्करी देवी	५)
अघोर-पन्थ का निरूपण	२५)
अध्यात्म-योग	५)
अक्षय-वट	५)
अनुभूत साधना	२५)
आनन्द-लहरी	१२)
आदि-शङ्कराचार्य अङ्क	१०)
आपदुद्धारक श्रीबटुक-भैरव स्तोत्र	१०)
कमला-कल्पतरु, पुष्प-१, २	८०)
काली-पूजा-पद्धति	१००)
काली-नित्यार्चन	१५)
कृष्ण-साधना	२५)
काली-कल्पतरु	३००)
काश्मीर की वैचारिक परम्परा	१०)
कुण्डलिनी-साधना	४०)
कुम्भ-पर्व अङ्क	१०)
गङ्गा-यमुना-सरस्वती पूजा-अङ्क	५)
गायत्री-कल्पतरु	५०)
गुरु-तन्त्र (हिन्दी टीका सहित)	१५)
गुरु-तत्त्व-दर्शन एवं गुरु-साधना	१५)
चक्र-पूजा	३०)
चक्र-पूजा के स्तोत्र	२५)
छिन्न-मस्ता नित्यार्चन	२५)
तत्त्व-विवेचन	३)
तन्त्रोक्त शब्द-ब्रह्म-साधना	४५)
तारा-कल्पतरु	३५)
दकारादि श्री दुर्गा-सहस्त्र-नाम	२०)
दश महा-विद्या-अष्टोत्तर-शत-नामावली	३०)
दश महा-विद्या-अष्टोत्तर-शत-नाम	३०)
दश महा-विद्या-कवच	३०)
दश महा-विद्या-गायत्री एवं ध्यान	३०)
दश महा-विद्या तन्त्र	६०)
दिव्य योग	६)
दीपावली की पूजा-विधि	१५)
दीपावली विशेषाङ्क	४५)
दीक्षा-प्रकाश	३५)
दुर्गा-साधना	१५)
दुर्गा सप्तशती (पद्यानुवाद)	१५)
दुर्गा सप्तशती (विशुद्ध-संस्करण)	२५)
दुर्गा सप्तशती (बीजात्मक)	१०)
दुर्गा-कल्पतरु (निबन्ध व स्तोत्र-संग्रह)	१५)
दुर्गा-सहस्त्र-नाम-साधना	५)
धन-प्राप्ति के प्रयोग	१०)
धर्म-चर्चा	१०)
धर्म-मार्ग पर	३५)
ध्यान-योग एवं विचार-योग	५)
नवरात्र-कल्पतरु	१००)
नवरात्र-पूजा-पद्धति (वैदिक)	३)
नवग्रह-साधना (सचित्र)	१००)
निष्काम योग एवं कर्म-संन्यास योग	१०)
पञ्च-मकार तथा भाव-त्रय	२०)
पारायण-विधि	६)
प्राण-तोषिणी तन्त्र (सर्ग, धर्म-काण्ड)	५०)
बगला-कल्पतरु	१००)
बगला-साधना	४५)
बाला-स्तव-मञ्जरी	२५)
बाला-कल्पतरु	३५)
बिहार के देवी-मन्दिर	८)

श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६ फोन: ०५३२-२५०२७८३, ०९४५०२२२७६७

‘कौल-कल्पतरु’ चण्डी की विशेष प्रस्तुति

श्रीललिता-सप्तशती

श्री श्रीविद्या
भगवती श्रीललिताम्बा की
सरलतम उपासना

*

‘त्रि-कूटों’
अथवा
‘पञ्च-दशी मन्त्र’ से
सम्पुटित
‘श्रीदुर्गा-सप्तशती’

* * *

प्रेरणा-स्तम्भ
प्रातः-स्मरणीय ‘कुल-भूषण’ पं० रमादत्त शुक्ल

सम्पादक
ऋतशील शर्मा

*

प्रकाशक
पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

श्री ललिता-सप्तशती

(त्रि-कूटों से सम्पुटित श्री दुर्गा-सप्तशती)

'श्रीत्रिपुरा महोपनिषत्' की
८वीं ऋचा में
जगज्जननी-स्वरूपा
भगवती श्रीललिताम्बा का
'पञ्च-दशी मन्त्र' वर्णित है।

'पञ्च-दशी मन्त्र' का अर्थ
भगवान् दत्तात्रेय, महर्षि दुर्वासा,
अगस्त्य आदि ने विविध तन्त्रों में
बताया है।

द्वितीय संस्करण

मार्गशीष पूर्णिमा, २०६९ वि०

श्री दत्तात्रेय-जयन्ती

२७ दिसम्बर, २०१२

परा-वाणी प्रेस, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-राज (उ०प्र०)

अनुक्रम

* * *

श्रीललिता-सप्तशती पाठ-विधि

(१) आसन एवं आत्म-शोधन–अपने आसन के अग्र भाग में भूमि पर स-विन्दु 'त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्र' का मण्डल बनाकर 'गन्ध-पुष्प' से उसका पूजन करें–ॐ आधार-शक्तये नमः।

(२) फिर उक्त मण्डल पर 'नमः' मन्त्र से जल छिड़कें और 'पञ्च-पात्र' रखकर 'ॐ' मन्त्र से उसके जल में 'गन्ध-पुष्प' छोड़कर, 'अंकुश-मुद्रा' द्वारा 'तीर्थों का आवाहन' करें। यथा–
ॐ गङ्गे च यमुने चैव, गोदावरि सरस्वति! नर्मदे सिन्धु कावेरि!, जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

(३) भूतापसारण–इसके बाद 'फट्'-मन्त्र का ७ बार जप करते हुए 'श्वेत सर्षप' (सरसों) या 'अक्षत' हाथ में लेकर निम्न मन्त्र का उच्चारण कर उन्हें अपने चारों ओर बिखेर दें–
ॐ अपसर्पन्तु ते भूता, ये भूता भुवि संस्थिताः। ये भूता विघ्न-कर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।

(४) आसन-शुद्धि–पहले आसन पर निम्न मन्त्र से 'गन्ध-पुष्प' छोड़ें–ॐ ह्रीं आधार-शक्तये कमलासनाय नमः। फिर आसन पर हाथ रखकर निम्न प्रकार से 'आसन-शोधन-मन्त्र' हेतु 'न्यास' करें। यथा–

विनियोग–ॐ अस्य आसन-शोधन-मन्त्रस्य मेरु-पृष्ठ ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसनोपवेशने विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास–मेरुपृष्ठ-ऋषये नमः शिरसि, सुतलं-छन्दसे नमः मुखे, कूर्म-देवतायै नमः हृदि, आसनोपवेशने विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

उक्त प्रकार से 'न्यास' करने के बाद हाथ जोड़कर 'प्रार्थना' करें। यथा–
ॐ पृथ्वि! त्वया धृता लोका, देवि! त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां नित्यं, पवित्रं कुरु चासनम् ।।

(५) इसके बाद निम्न-लिखित चार मन्त्रों द्वारा 'आत्म-शोधन' करें। यथा–
ॐ ऐं आत्म-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा । ॐ ह्रीं विद्या-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।।
ॐ क्लीं शिव-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्व-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।।

(६) गुरु-पूजन–'आत्म-शोधन' के पश्चात् 'प्राणायाम' करके अपने सम्मुख 'दीपक' प्रज्वलित कर 'गुरु-देव' का स्मरण करें। यथा–

ॐ आनन्दमानन्द-करं प्रसन्नं, ज्ञान-स्वरूपं निज-बोध-रूपम् ।
योगीन्द्रमीड्यं भव-रोग-वैद्यं, श्रीमद्-गुरुं नित्यमऽहं नमामि।।

उक्त प्रकार ध्यान करके 'मानसोपचारों' द्वारा 'गुरु-पूजन' करें। यथा–

ॐ गुं गुरुभ्यो नमः लं पृथिव्यात्मकं गन्धं परिकल्पयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः यं वाय्वात्मकं धूपं घ्रापयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः रं वह्न्यात्मकं दीपं सन्दर्शयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः सं सर्वात्मकं ताम्बूलं कल्पयामि।।

(७) गणेश-पूजन–इसके बाद 'गणपति' का पूजन करें–

ॐ गजाननं भूत-गणाधि-सेवितं, कपित्थ-जम्बू-फल-चारु-भक्षणम् ।
उमा-सुतं शोक-विनाश-कारकं, नमामि विघ्नेश्वर-पाद-पङ्कजम् ।।

ॐ वक्र-तुण्ड! महा-काय!, सूर्य-कोटि-सम-प्रभ!। निर्विघ्नं कुरु मे देव!, सर्व-कार्येषु सर्वदा।।

श्रीललिता-सप्तशती सप्त-दिवसीय पाठ-विधि

'पाठोऽयं वरकार:' सूत्र के अनुसार 'श्रीदुर्गा-सप्तशती' के तेरह अध्याओं का सात दिनों में सरल एवं श्रेष्ठ पाठ-क्रम

पहले दिन अध्याय १ का पाठ	(मन्त्र १ से १०४ तक)
दूसरे दिन अध्याय २-३ का पाठ	(मन्त्र १०५ से २१७ तक)
तीसरे दिन अध्याय ४ का पाठ	(मन्त्र २१८ से २५९ तक)
चौथे दिन अध्याय ५-६-७-८ का पाठ	(मन्त्र २६० से ५०२ तक)
पाँचवें दिन अध्याय ९-१० का पाठ	(मन्त्र ५०३ से ५७५ तक)
छठवें दिन अध्याय ११ का पाठ	(मन्त्र ५७६ से ६३० तक)
सातवें दिन अध्याय १२-१३ का पाठ	(मन्त्र ६३१ से ७०१ तक)

(८) सङ्कल्प–इसके पश्चात् अपने अभीष्ट कर्म के अनुसार 'सङ्कल्प' करें। यथा–

'दाहिने हाथ' में कुश, तिल, तुलसी, हरीतकी-फल (हल्दी की गाँठ) और 'पञ्च-पात्र' से जल लेकर, दाएँ घुटने के बल, उत्तर की ओर मुख करके बैठे और निम्न प्रकार से त्रि-कूटों (पञ्चदशी-मन्त्र) से सम्पुटित 'श्रीदुर्गा-सप्तशती' के पाठ करने का सङ्कल्प करें। यथा–

ॐ तत् सत् (ब्रह्म ही एक-मात्र सत्य है), अद्यैतस्य (आज इस), ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय-प्रहरार्द्धे (ब्रह्मा के प्रथम दिवस के दूसरे पहर में), श्रीश्वेत-वराह-कल्पे (श्रीश्वेत-वराह नामक कल्प में), जम्बू-द्वीपे (जम्बू नामक द्वीप में), भरत-खण्डे (भरत के भू-खण्ड में), आर्यावर्त्त-देशे (आर्यावर्त्त नामक देश में), अमुक पुण्य-क्षेत्रे (अमुक पवित्र क्षेत्र में), अमुक-प्रदेशे (अमुक प्रदेश में), अमुक-जनपदे (अमुक जिले में), अमुक-स्थाने (अमुक स्थान में), अमुक-संवत्सरे (अमुक संवत्सर में), अमुक-मासे (अमुक मास में), अमुक-पक्षे (अमुक पक्ष में), अमुक-तिथौ (अमुक तिथि में), अमुक-वासरे (अमुक दिवस में), अमुक-गोत्रोत्पन्नो (अमुक गोत्र में उत्पन्न), अमुक-नाम-शर्मा-वर्मा-दास (अमुक नामवाला शर्मा, वर्मा, दास), जगज्जननी आदि-विद्या श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-देवता-प्रीति-पूर्वक सर्वाभीष्ट-सिद्धयर्थं (जगज्जननी आदि-विद्या श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती की प्रसन्नता-पूर्वक सभी कामनाओं के सिद्धि के लिए), त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मनुना-सम्पुटित श्रीचण्डी-पाठं सभक्त्याऽहं करिष्ये (त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मन्त्र-सम्पुटित श्रीचण्डी-पाठ का मैं भक्ति-पूर्वक पाठ करूँगा)।

(९) त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मन्त्र का विनियोगादि–उक्त प्रकार से सङ्कल्प करने के बाद त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मन्त्र का विनियोगादि करना चाहिए। यथा–

विनियोग–ॐ अस्य श्रीललिता-महा-त्रिपुर-सुन्दरी-मन्त्रस्य श्रीदक्षिणामूर्ति ऋषि:, पंक्ति: छन्द:, श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी देवता, ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' वीजं, सौ: 'स-क-ल-ह्रीं' शक्ति:,

क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कीलकं, सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे चतुर्वर्गाप्तये च जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीदक्षिणामूर्ति-ऋषये नमः, मुखे पंक्तिश्छन्दसे नमः, हृदि श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः, गुह्ये ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं'-वीजाय नमः, पादयोः सौः 'स-क-ल-ह्रीं'-शक्तये नमः, सर्वाङ्गे क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कीलकाय नमः, सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे चतुर्वर्गाप्तये च जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कराङ्ग-न्यास-ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' अंगुष्ठाभ्यां नमः, क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' तर्जनीभ्यां नमः, सौः 'स-क-ल-ह्रीं' मध्यमाभ्यां नमः, ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' अनामिकाभ्यां नमः, क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कनिष्ठाभ्यां नमः, सौः 'स-क-ल-ह्रीं' करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

षडङ्ग-न्यास- ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' हृदयाय नमः, क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' शिरसे स्वाहा, सौः 'स-क-ल-ह्रीं' शिखायै वषट्, ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' कवचाय हुम्, क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' नेत्र-त्रयाय वौषट्, सौः 'स-क-ल-ह्रीं' अस्त्राय फट्।

ध्यान-विनियोगादि करने के बाद जगज्जननी भगवती श्रीललिता का ध्यान करना चाहिए-

चतुर्भुजे चन्द्र-कलावतंसे, कुचोन्नते! कुंकुम-राग-शोणे!।
पुण्ड्रेक्षु-पाशांकुश-पुष्प-बाण-हस्ते! नमस्ते जगदेक-मातः!।।१

कुंकुम - पङ्क - समाभामंकुश - पाशेक्षु - कुसुम - शरम्।
पङ्कज-मध्य-निषण्णां पङ्केरुह-लोचनां परां वन्दे।।२

मानस-पूजन-उक्त प्रकार से ध्यान करने के बाद भगवती श्रीललिता का मानसिक पूजन करना चाहिए। यथा-ॐ लं पृथ्वी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीललिताम्बा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिताम्बा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीललिताम्बा-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिताम्बा-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जलं-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिताम्बा-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिताम्बा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

(१०) मन्त्र-जप-मानस-पूजन करने के बाद भगवती श्रीललिता के त्रि-कूटों (पञ्च-दशाक्षर मन्त्र) का जप अर्थ को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए।

मन्त्र-'क-ए-ई-ल-ह्रीं' (वाग्भव-कूट) 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' (कामराज-कूट) 'स-क-ल-ह्रीं' (शक्ति-कूट)। (पन्द्रह अक्षर)।

(११) सम्पुटित-पाठ-उक्त प्रकार से यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद अपने सम्मुख पहले से प्रज्वलित 'दीपक' की ज्योति में आदि-विद्या भगवती श्रीललिता का ध्यान करते हुए, हाथ जोड़कर 'कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्० श्लोक पढ़ते हुए तीनों कूटों से सम्पुटित श्रीदुर्गा-सप्तशती के तेरह अध्यायों (७०० मन्त्रों) का पाठ करना चाहिए।

यदि एक दिन में सभी तेरह अध्यायों (७०० मन्त्रों) का 'पाठ' करना सम्भव न हो, तो 'पाठोऽयं वर-कारः'-सूत्रानुसार सात दिनों में तेरह अध्यायों (७०० मन्त्रों) का 'पाठ' करना चाहिए।

'पाठ' की समाप्ति के बाद एक बार पुनः 'त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मन्त्र का विनियोगादि' कर यथा-शक्ति 'जप' करना चाहिए तथा 'क्षमा-प्रार्थना' एवं 'पाठ-समर्पण' करना चाहिए।

★★★

गुप्तावतार बाबाश्री के प्रवचनों के आधार पर
भगवती श्रीललिताम्बा के पञ्च-दशी मन्त्र त्रि-कूटों का अर्थ

वाग्-भव कूट (क-ए-ई-ल-ह्रीं)

हे वाणी-युक्त ईश्वर!
मुझे ऐसी वाणी-शक्ति
प्रदान कीजिए, जिससे मैं
विश्व की उत्पत्ति-कारक
माया के दिव्य गुण गा
सकूँ।

काम-कूट (ह-स-क-ह-ल-ह्रीं)

हे इच्छा-युक्त ईश्वर!
मेरी सम्पूर्ण कामनाएँ
पूर्ण रूप से और विश्व
की सम्पूर्ण क्रियाएँ तथा
माया किस प्रकार सिद्ध
होती हैं, वह मार्ग आप
दिखाइए।

शक्ति-कूट (स-क-ल-ह्रीं)

हे शक्ति-युक्त ईश्वर!
आपकी माया हमें दिव्य
विश्व-सृष्टि-रूप से दिखाई
दे अर्थात् आपकी शक्ति-
मय माया का हमें दर्शन हो।

प्रथमः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ मार्कण्डेय उवाच।।१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सावर्णिः सूर्य-तनयो, यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः।
निशामय तदुत्पत्तिं, विस्तराद् गदतो मम।।२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
महा-मायाऽनुभावेन, यथा मन्वन्तराधिपः।
स बभूव महा-भागः, सावर्णिस्तनयो रवेः।।३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं, चैत्र-वंश-समुद्भवः।
सुरथो नाम राजाऽभूत्, समस्ते क्षिति-मण्डले।।४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्य पालयतः सम्यक्, प्रजाः पुत्रानिवौरसान्।
बभूवुः शत्रवो भूपाः, कोला-विध्वंसिनस्तदा।।५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्य तैरभवद् युद्धमति - प्रबल - दण्डिनः।
न्यूनैरपि स तैर्युद्धे, कोला-विध्वंसिभिर्जितः।।६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः स्व-पुरमायातो, निज-देशाधिपोऽभवत्।
आक्रान्तः स महा-भागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः।।७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः।
कोषो बलं चापहृतं, तत्रापि स्व-पुरे ततः।।८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो मृगया-व्याजेन, हृत-स्वाम्यः स भू-पतिः।
एकाकी हयमारुह्य, जगाम गहनं वनम्।।९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स तत्राश्रममद्राक्षीद्, द्विज-वर्यस्य मेधसः।
प्रशान्त-श्वापदाकीर्णं, मुनि-शिष्योप-शोभितम्।।१०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्थौ कञ्चित् स कालं च, मुनिना तेन सत्कृतः।
इतश्चेतश्च विचरंस्तस्मिन् मुनि-वराश्रमे।।११
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सोऽचिन्तयत् तदा तत्र, ममत्वाकृष्ट-चेतनः।।१२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं, मया हीनं पुरं हि तत्।
मद्-भृत्यैस्तैरसद्-वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा।।१३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
न जाने स प्रधानो मे, शूर-हस्ती सदा-मदः।
मम वैरि-वशं यातः, कान् भोगानुप-लप्स्यते।।१४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ये ममानुगता नित्यं, प्रसाद - धन - भोजनैः।
अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य, कुर्वन्त्यन्य-मही-भृताम्।।१५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
असम्यग्-व्यय-शीलैस्तैः, कुर्वद्भिः सततं व्ययम्।
सञ्चितः सोऽति-दुःखेन, क्षयं कोषो गमिष्यति।।१६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एतच्चान्यच्च सततं, चिन्तयामास पार्थिवः।
तत्र विप्राश्रमाभ्यासे, वैश्यमेकं ददर्श सः।।१७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो! हेतुश्चागमनेऽत्र कः।
स-शोक इव कस्मात् त्वं, दुर्मना इव लक्ष्यसे।।१८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य, भू-पतेः प्रणयोदितम्।
प्रत्युवाच स तं वैश्यः, प्रश्रयावनतो नृपम्।।१९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वैश्य उवाच ।। २० ।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले।
पुत्र - दारैर्निरस्तश्च, धन - लोभादसाधुभिः।।२१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

विहीनश्च धनैर्दारैः, पुत्रैरादाय मे धनम्।
वनमभ्यागतो दुःखी, निरस्तश्चाप्त-बन्धुभिः।।२२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां, कुशलाकुशलात्मिकाम्।
प्रवृत्तिं स्व-जनानां च, दाराणां चात्र संस्थितः।।२३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

किं तु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम्।।२४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

कथं ते किं नु सद्-वृत्ताः, दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः।।२५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

राजोवाच ।।२६।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः, पुत्र-दारादिभिर्धनैः।।२७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम्।।२८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वैश्य उवाच ।।२९।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवमेतद् यथा प्राह, भवानस्मद्-गतं वचः।

किं करोमि न बध्नाति, मम निष्ठुरतां मनः।।३०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यैः सन्त्यज्य पितृ-स्नेहं, धन-लुब्धैर्निराकृतः।

पति-स्वजन-हार्दं च, हार्दि तेष्वेव मे मनः।।३१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

किमेतन्नाभि-जानामि, जानन्नपि महा-मते!

यत् प्रेम-प्रवणं चित्तं, विगुणेष्वपि बन्धुषु।।३२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तेषां कृते मे निःश्वासो, दौर्मनस्यं च जायते।।३३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम्।।३४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मार्कण्डेय उवाच।।३५।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततस्तौ सहितौ विप्र! तं मुनिं समुपस्थितौ।।३६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

समाधिर्नाम वैश्योऽसौ, स च पार्थिव-सत्तमः।
कृत्वा तु तौ यथा-न्यायं, यथार्हं तेन संविदम्।।३७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्य-पार्थिवौ।।३८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

राजोवाच।।३९।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत्।
दुःखाय यन्मे मनसः, स्व-चित्तायत्ततां विना।।४०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ममत्वं गत-राज्यस्य, राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि।
जानतोऽपि यथाऽज्ञस्य, किमेतन्मुनि-सत्तम?।।४१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अयं च निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः।
स्व-जनेन च सन्त्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति।।४२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवमेष तथाऽहं च, द्वावप्यत्यन्त-दुःखितौ।
दृष्ट-दोषेऽपि विषये, ममत्वाकृष्ट-मानसौ।।४३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तत् केनैतन्महा-भाग!यन्मोहो ज्ञानिनोरपि?।।४४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ममास्य च भवत्येषाऽविवेकान्धस्य मूढता।।४५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।४६।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ज्ञानमस्ति समस्तस्य, जन्तोर्विषय-गोचरे।

विषयश्च महा-भाग! याति चैवं पृथक् पृथक्।।४७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दिवान्धाः प्राणिनः केचिद्, रात्रावन्धास्तथाऽपरे।

केचिद् दिवा तथा रात्रौ, प्राणिनस्तुल्य-दृष्टयः।।४८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं, किन्तु ते नहि केवलम्।

यतो हि ज्ञानिनः सर्वे, पशु-पक्षि-मृगादयः।।४९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ज्ञानं च तन्मनुष्याणां, यत् तेषां मृग-पक्षिणाम्।

मनुष्याणां च यत् तेषां, तुल्यमन्यत् तथोभयोः।।५०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान्, पतङ्गाञ्छाव-चञ्चुषु।
कण-मोक्षाद् ऋतान्मोहात्, पीड्यमानानपि क्षुधा।।५१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मानुषा मनुज-व्याघ्र! साभिलाषाः सुतान् प्रति।
लोभात् प्रत्युपकाराय, नन्वेते किं न पश्यसि?।।५२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तथापि ममतावर्ते, मोह - गर्ते निपातिताः।
महा-माया-प्रभावेण, संसार-स्थिति-कारिणः।।५३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तन्नात्र विस्मयः कार्यो, योग-निद्रा जगत्-पतेः।
महा-माया हरेश्चैतत्, तया सम्मोह्यते जगत्।।५४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ज्ञानिनामपि चेतांसि, देवी भगवती हि सा।
बलादाकृष्य मोहाय, महा-माया प्रयच्छति।।५५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तया विसृज्यते विश्वं, जगदेतच्चराचरम्।
सैषा प्रसन्ना वरदा, नृणां भवति मुक्तये।।५६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु-भूता सनातनी।।५७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

संसार-बन्ध-हेतुश्च, सैव सर्वेश्वरेश्वरी।।५८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

राजोवाच।।५९।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भगवन्! का हि सा देवी, महा-मायेति यां भवान्।

ब्रवीति कथमुत्पन्ना, सा कर्मास्याश्च किं द्विज?।।६०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यत्-स्वभावा च सा देवी, यत्-स्वरूपा यदुद्भवा।।६१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तत् सर्वं श्रोतुमिच्छामि, त्वत्तो ब्रह्म-विदां वर!।।६२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच।।६३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम्।।६४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तथापि तत्-समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम।।६५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवानां कार्य-सिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा।

उत्पन्नेति तदा लोके, सा नित्याऽप्यभिधीयते।।६६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

योग - निद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवी - कृते।

आस्तीर्य शेषमभजत्, कल्पान्ते भगवान् प्रभुः।।६७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तदा द्वावसुरौ घोरौ, विख्यातौ मधु-कैटभौ।

विष्णु-कर्ण-मलोद्भूतौ, हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ।।६८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स नाभि-कमले विष्णोः, स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः।

दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ, प्रसुप्तं च जनार्दनम्।।६९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तुष्टाव योग-निद्रां तामेकाग्र-हृदय-स्थितः।

विबोधनार्थाय हरेर्हरि-नेत्र-कृतालयाम्।।७०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ब्रह्मोवाच ।।७१।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं, स्थिति-संहार-कारिणीं।

स्तौमि निद्रां भगवतीं, विष्णोरतुल-तेजसः।।७२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि, वषट्कार-स्वरात्मिका।।७३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सुधा त्वमक्षरे नित्ये! त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता।।७४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अर्ध-मात्रा-स्थिता नित्या, यानुच्चार्या विशेषतः।
त्वमेव सन्ध्या गायत्री, त्वं देवि! जननी परा।।७५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
त्वयैतद् धार्यते विश्वं, त्वयैतत् सृज्यते जगत्।
त्वयैतत् पाल्यते देवि! त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा।।७६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विसृष्टौ सृष्टि-रूपा त्वं, स्थिति-रूपा च पालने।
तथा संहृति-रूपान्ते, जगतोऽस्य जगन्मये।।७७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
महा-विद्या महा-माया, महा-मेधा महा-स्मृतिः।
महा-मोहा च भवती, महा-देवी महाऽसुरी।।७८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य, गुण-त्रय-विभाविनी।
काल-रात्रिर्महा-रात्रिर्मोह-रात्रिश्च दारुणा।।७९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं, ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोध-लक्षणा।
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च।।८०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
खड्गिनी शूलिनी घोरा, गदिनी चक्रिणी तथा।
शङ्खिनी चापिनी वाण-भुशुण्डी-परिघायुधा।।८१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सौम्या सौम्य-तराऽशेष-सौम्येभ्यस्त्वति-सुन्दरी।
पराऽपराणां परमा, त्वमेव परमेश्वरी।।८२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यच्च किञ्चित् क्वचिद् वस्तु, सदसद् वाऽखिलात्मिके!
तस्य सर्वस्य या शक्तिः, सा त्वं किं स्तूयसे तदा।।८३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यया त्वया जगत्-स्रष्टा, जगत्-पाताऽत्ति यो जगत्।
सोऽपि निद्रा-वशं नीतः, कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः।।८४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विष्णुः शरीर - ग्रहणमहमीशान एव च।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां, कः स्तोतुं शक्ति-मान् भवेत्।।८५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि! संस्तुता।
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु - कैटभौ।।८६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

प्रबोधं स जगत्-स्वामी, नीयतामच्युतो लघु।
बोधश्च क्रियतामस्य, हन्तुमेतौ महाऽसुरौ।।८७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।८८।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवं स्तुता तदा देवी, तामसी तत्र वेधसा।
विष्णोः प्रबोधनार्थाय, निहन्तुं मधु-कैटभौ।।८९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

नेत्रास्य-नासिका-बाहु-हृदयेभ्यस्तथोरसः।
निर्गम्य दर्शने तस्थौ, ब्रह्मणोऽव्यक्त -जन्मनः।।९०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः।
एकार्णवेऽहि-शयनात्, ततः स ददृशे च तौ।।९१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मधु - कैटभौ दुरात्मानावति - वीर्य - पराक्रमौ।
क्रोध-रक्तेक्षणावत्तुं, ब्रह्माणं जनितोद्यमौ।।९२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

समुत्थाय ततस्ताभ्यां, युयुधे भगवान् हरिः।
पञ्च-वर्ष-सहस्राणि, बाहु-प्रहरणो विभुः।।९३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तावप्यति-बलोन्मत्तौ, महा-माया-विमोहितौ।।९४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
उक्त-वन्तौ वरोऽस्मत्तो, व्रियतामिति केशवम्।।९५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भगवानुवाच ।।९६।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भवेतामद्य मे तुष्टौ, मम वध्यावुभावपि।।९७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
किमन्येन वरेणात्र, एतावद्धि वृतं मम।।९८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ऋषिरुवाच ।।९९।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वञ्चिताभ्यामिति तदा, सर्वमापो-मयं जगत्।
विलोक्य ताभ्यां गदितो, भगवान् कमलेक्षणः।।१००
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
आवां जहि न यत्रोर्वी, सलिलेन परिप्लुता।।१०१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच।।१०२।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तथेत्युक्त्वा भगवता, शङ्ख-चक्र-गदा-भृता।
कृत्वा चक्रेण वै च्छिन्ने, जघने शिरसी तयोः।।१०३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवमेषा समुत्पन्ना, ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम्।
प्रभावमस्या देव्यास्तु, भूयः शृणु वदामि ते ।।१०४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वन्दे श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्!
वन्दे जगन्मोहिनीम्!
वन्दे सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्!
वन्दे सर्व-परां शिवां श्रीराज-राजेश्वरीम्!

द्वितीयः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच ।।१०५।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देवासुरमभूद् युद्धं, पूर्णमब्द-शतं पुरा।
महिषेऽसुराणामधिपे, देवानां च पुरन्दरे।।१०६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तत्रासुरैर्महा - वीर्यैर्देव - सैन्यं पराजितम्।
जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः।।१०७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः पराजिता देवाः, पद्म-योनिं प्रजा-पतिम्।
पुरस्कृत्य गतास्तत्र, यत्रेश-गरुड-ध्वजौ।।१०८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यथा-वृत्तं तयोस्तद्-वन्महिषासुर-चेष्टितम्।
त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभि-भव-विस्तरम्।।१०९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां, यमस्य वरुणस्य च।
अन्येषां चाधिकारान् स, स्वयमेवाधि-तिष्ठति।।११०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स्वर्गान्निराकृताः सर्वे, तेन देव-गणा भुवि।
विचरन्ति यथा मर्त्या, महिषेण दुरात्मना।।१११
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एतद् वः कथितं सर्वममरारि-विचेष्टितम्।
शरणं च प्रपन्नाः स्मो, वधस्तस्य विचिन्त्यताम्।।११२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इत्थं निशम्य देवानां, वचांसि मधु-सूदनः।
चकार कोपं शम्भुश्च, भ्रकुटी-कुटिलाननौ।।११३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततोऽति-कोप-पूर्णस्य, चक्रिणो वदनात् ततः।
निश्चक्राम महत् तेजो, ब्रह्मणः शङ्करस्य च।।११४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अन्येषां चैव देवानां, शक्रादीनां शरीरतः।
निर्गतं सु-महत् तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत।।११५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अतीव - तेजसः कूटं, ज्वलन्तमिव पर्वतम्।
ददृशुस्ते सुरास्तत्र, ज्वाला-व्याप्त-दिगन्तरम्।।११६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अतुलं तत्र तत् तेजः, सर्व-देव-शरीरजम्।
एकस्थं तदभून्नारी, व्याप्त-लोक-त्रयं त्विषा।।११७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम्।
यान्येन चाभवन् केशा, बाहवो विष्णु-तेजसा।।११८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सौम्येन स्तनयोर्युग्मं, मध्यं चैन्द्रेण चाभवत्।
वारुणेन च जङ्घोरू, नितम्बस्तेजसा भुवः।।११९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ब्रह्मणस्तेजसा पादौ, तदंगुलयोऽर्क-तेजसा।
वसूनां च करांगुल्यः, कौबेरेण च नासिका।।१२०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः, प्राजापत्येन तेजसा।
नयन-त्रितयं जज्ञे, तथा पावक-तेजसा।।१२१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः, श्रवणावनिलस्य च।
अन्येषां चैव देवानां, सम्भवस्तेजसां शिवा।।१२२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः समस्त-देवानां, तेजो-राशि-समुद्भवाम्।
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः।।१२३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शूलं शूलाद् विनिष्कृष्य, ददौ तस्यै पिनाक-धृक्।
चक्रं च दत्तवान् कृष्णः, समुत्पाद्य स्व-चक्रतः।।१२४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शङ्खं च वरुणः शक्तिं, ददौ तस्यै हुताशनः।
मारुतो दत्त-वांश्चापं, बाण-पूर्णे तथेषुधी।।१२५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य, कुलिशादमराधिपः।
ददौ तस्यै सहस्राक्षो, घण्टामैरावताद् गजात्।।१२६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
काल-दण्डाद् यमो दण्डं, पाशं चाम्बु-पतिर्ददौ।
प्रजापतिश्चाक्ष-मालां, ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम्।।१२७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
समस्त-रोम-कूपेषु, निज-रश्मीन् दिवाकरः।
कालश्च दत्त-वान् खड्गं, तस्याश्चर्म च निर्मलम्।।१२८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाऽम्बरे।
चूडा-मणिं तथा दिव्यं, कुण्डले कटकानि च।।१२९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अर्ध-चन्द्रं तथा शुभ्रं, केयूरान् सर्व-बाहुषु।
नूपुरौ विमलौ तद्-वद्, ग्रैवेयकमनुत्तमम्।।१३०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अंगुलीयक-रत्नानि, समस्तास्वंगुलीषु च।
विश्व-कर्मा ददौ तस्यै, परशुं चाति-निर्मलम्।।१३१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अस्त्राण्यनेक-रूपाणि, तथाऽभेद्यं च दंशनम्।
अम्लान-पङ्कजां मालां, शिरस्युरसि चापराम्।।१३२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अददज्जलधिस्तस्यै, पङ्कजं चाति-शोभनम्।
हिम-वान् वाहनं सिंहं, रत्नानि विविधानि च।।१३३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ददावशून्यं सुरया, पान-पात्रं धनाधिपः।
शेषश्च सर्व - नागेशो, महा - मणि - विभूषितम्।।१३४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
नाग-हारं ददौ तस्यै, धत्ते यः पृथिवीमिमाम्।
अन्यैरपि सुरैर्देवी, भूषणैरायुधैस्तथा।।१३५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सम्मानिता ननादोच्चैः, साट्टहासं मुहुर्मुहुः।
तस्या नादेन घोरेण, कृत्स्नमापूरितं नभः।।१३६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अमायतातिमहता, प्रति-शब्दो महानभूत्।
चुक्षुभुः सकला लोकाः, समुद्राश्च चकम्पिरे।।१३७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चचाल वसुधा चेलुः, सकलाश्च मही-धराः।
जयेति देवाश्च मुदा, तामूचुः सिंह-वाहिनीम्।।१३८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां, भक्ति-नम्रात्म-मूर्तयः।
दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं, त्रैलोक्यममरारयः।।१३९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सन्नद्धाखिल-सैन्यास्ते, समुत्तस्थुरुदायुधाः।
आः किमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषासुरः।।१४०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः।
स ददर्श ततो देवीं, व्याप्त-लोक-त्रयां त्विषा।।१४१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पादाक्रान्त्या नत-भुवं, किरीटोल्लिखिताम्बराम्।
क्षोभिताशेष-पातालां, धनुर्ज्या-निःस्वनेन ताम्।।१४२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दिशो भुज-सहस्रेण, समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम्।
ततः प्रववृते युद्धं, तया देव्या सुर-द्विषाम्।।१४३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपित-दिगन्तरम्।
महिषासुर-सेनानीश्चिक्षुराख्यो महाऽसुरः।।१४४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्ग-बलान्वितः।
रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महाऽसुरः।।१४५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अयुध्यतायुतानां च, सहस्रेण महा-हनुः।
पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महाऽसुरः।।१४६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अयुतानां शतैः षड्भिर्वाष्कलो युयुधे रणे।
गज - वाजि - सहस्रौघैरनेकैः परिवारितः।।१४७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वृतो रथानां कोट्या च, युद्धे तस्मिन्नयुध्यत।
विडालाख्योऽयुतानां च, पञ्चाशद्भि रथायुतैः।।१४८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
युयुधे संयुगे तत्र, रथानां परिवारितः।
अन्ये च तत्रायुतशो, रथ-नाग-हयैर्वृताः।।१४९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
युयुधुः संयुगे देव्या, सह तत्र महाऽसुराः।
कोटि-कोटि-सहस्रैस्तु, रथानां दन्तिनां तथा।।१५०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हयानां च वृतो युद्धे, तत्राभून्महिषासुरः।
तोमरैर्भिन्दिपालैश्च, शक्तिभिर्मुसलैस्तथा।।१५१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
युयुधुः संयुगे देव्या, खड्गैः परशु-पट्टिशैः।
केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः, केचित् पाशांस्तथाऽपरे।।१५२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देवीं खड्ग-प्रहारैस्तु, ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः।
सापि देवी ततस्तानि, शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका।।१५३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
लीलयैव प्रचिच्छेद, निज-शस्त्रास्त्र-वर्षिणी।
अनायस्तानना देवी, स्तूयमाना सुरर्षिभिः।।१५४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मुमोचासुर-देहेषु, शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी।
सोऽपि क्रुद्धो धुत-सटो, देव्या वाहन-केशरी।।१५५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चचारासुर-सैन्येषु, वनेष्विव हुताशनः।
निःश्वासान् मुमुचे यांश्च, युध्यमाना रणेऽम्बिका।।१५६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
त एव सद्यः सम्भूता, गणाः शत-सहस्रशः।
युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालासि - पट्टिशैः।।१५७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
नाशयन्तोऽसुर-गणान्, देवी-शक्त्युपबृंहिताः।
अवादयन्त पटहान्, गणाः शङ्खांस्तथाऽपरे।१५८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मृदङ्गांश्च तथैवान्ये, तस्मिन् युद्ध-महोत्सवे।
ततो देवी त्रिशूलेन, गदया शक्ति-वृष्टिभिः।।१५९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
खड्गादिभिश्च शतशो, निजघान महाऽसुरान्।
पातयामास चैवान्यान्, घण्टा-स्वन-विमोहितान्।।१६०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
असुरान् भुवि पाशेन, बद्ध्वा चान्यानकर्षयत्।
केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः, खड्ग-पातैस्तथाऽपरे।।१६१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विपोथिता निपातेन, गदया भुवि शेरते।
वेमुश्च केचिद् रुधिरं, मुसलेन भृशं हताः।।१६२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
केचिन्निपतिता भूमौ, भिन्नाः शूलेन वक्षसि।
निरन्तराः शरौघेण, कृताः केचिद् रणाजिरे।।१६३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
श्येनानुकारिणः प्राणान्, मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः।
केषांचिद् बाहवश्छिन्नाश्छिन्न-ग्रीवास्तथाऽपरे।।१६४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः।
विच्छिन्न-जङ्घास्त्वपरे, पेतुरुर्व्यां महाऽसुराः।।१६५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एक-बाह्वक्षि-चरणाः, केचिद् देव्या द्विधा कृताः।
छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि, पतिताः पुनरुत्थिताः।।१६६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

कबन्धा युयुधुर्देव्या, गृहीत-परमायुधाः।
ननृतुश्चापरे तत्र, युद्धे तूर्य-लयाश्रिताः।।१६७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

कबन्धाश्छिन्न-शिरसः, खड्ग-शक्त्यृष्टि-पाणयः।
तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो, देवीमन्ये महाऽसुराः।।१६८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

पातितै रथ - नागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा।
अगम्या साऽभवत् तत्र, यत्राऽभूत् स महा-रणः।।१६९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शोणितौघा महा - नद्यः, सद्यस्तत्र प्रसुस्रुवुः।
मध्ये चासुर-सैन्यस्य, वारणासुर-वाजिनाम्।।१७०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क्षणेन तन्महा-सैन्यमसुराणां तथाऽम्बिका।
निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृण-दारु-महा-चयम्।।१७१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स च सिंहो महा-नादमृत्सृजन् धुत-केशरः।
शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति।।१७२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्या गणैश्च तैस्तत्र, कृतं युद्धं महाऽसुरैः।
यथैषां तुतुषुर्देवाः, पुष्प-वृष्टि-मुचो दिवि।।१७३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तृतीयः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच ।।१७४।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
निहन्य-मानं तत्-सैन्यमवलोक्य महाऽसुरः।
सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद्, ययौ योद्धुमथाम्बिकाम्।।१७५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स देवीं शर-वर्षेण, ववर्ष समरेऽसुरः।
यथा मेरु-गिरेः शृङ्गं, तोय-वर्षेण तोयदः।।१७६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्य च्छित्वा ततो देवी, लीलयैव शरोत्करान्।
जघान तुरगान् बाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम्।।१७७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चिच्छेद च धनुः सद्यो, ध्वजं चाति-समुच्छ्रितम्।
विव्याध चैव गात्रेषु, छिन्न-धन्वानमाशुगैः।।१७८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स च्छिन्न-धन्वा विरथो, हताश्वो हत-सारथिः।
अभ्यधावत तां देवीं, खड्ग-चर्म-धरोऽसुरः।।१७९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सिंहमाहत्य खड्गेन, तीक्ष्ण-धारेण मूर्धनि।
आजघान भुजे सव्ये, देवीमप्यति-वेग-वान्।।१८०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य, पफाल नृप-नन्दन।
ततो जग्राह शूलं स, कोपादरुण-लोचनः।।१८१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चिक्षेप च ततस्तत् तु, भद्र-काल्यां महाऽसुरः।
जाज्वल्य-मानं तेजोभी, रवि-बिम्बमिवाम्बरात्।।१८२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दृष्ट्वा तदापतच्छूलं, देवी शूलममुञ्चत।
तच्छूलं शतधा तेन, नीतं स च महाऽसुरः।।१८३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हते तस्मिन् महा-वीर्ये, महिषस्य चमू-पतौ।
आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः।।१८४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ, देव्यास्तामम्बिका द्रुतम्।
हुङ्काराभि-हतां भूमौ, पातयामास निष्प्रभाम् ।।१८५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भग्नां शक्तिं निपतितां, दृष्ट्वा क्रोध-समन्वितः।
चिक्षेप चामरः शूलं, बाणैस्तदपि साच्छिनत्।।१८६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः सिंहः समुत्पत्य, गज-कुम्भान्तरे स्थितः।
बाहु-युद्धेन युयुधे, तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा।।१८७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
युद्ध्यमानौ ततस्तौ तु, तस्मान्नागान् महीं गतौ।
युयुधातेऽति-संरब्धौ, प्रहारैरति-दारुणैः।।१८८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो वेगात् खमुत्पत्य, निपत्य च मृगारिणा।
कर-प्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक् कृतम्।।१८९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
उदग्रश्च रणे देव्या, शिला-वृक्षादिभिर्हतः।
दन्त-मुष्टि-तलैश्चैव, करालश्च निपातितः।।१९०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देवी क्रुद्धा गदा-पातैश्चूर्णयामास चोद्धतम्।
वाष्कलं भिन्दिपालेन, बाणैस्ताम्रं तथाऽन्धकम्।।१९१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
उग्रास्यमुग्र - वीर्यं च, तथैव च महा - हनुम्।
त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन, जघान परमेश्वरी।।१९२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विडालस्यासिना कायात्, पातयामास वै शिरः।
दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ, शरैर्निन्ये यम-क्षयम्।।१९३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एवं संक्षीयमाणे तु, स्व - सैन्ये महिषासुरः।
माहिषेण स्वरूपेण, त्रासयामास तान् गणान्।।१९४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कांश्चित् तुण्ड-प्रहारेण, खुर-क्षेपैस्तथाऽपरान्।
लांगूल-ताडितांश्चान्याञ्छृङ्गाभ्यां च विदारितान्।।१९५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वेगेन कांश्चिदपरान्, नादेन भ्रमणेन च।
निःश्वास-पवनेनान्यान्, पातयामास भू-तले।।१९६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः।
सिंहं हन्तुं महा-देव्याः, कोपं चक्रे ततोऽम्बिका।।१९७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सोऽपि कोपान्महा-वीर्यः, खुर-क्षुण्ण-मही-तलः।
शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च।।१९८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वेग-भ्रमण-विक्षुण्णा, मही तस्य व्यशीर्यत।
लांगूलेनाहतश्चाब्धिः, प्लावयामास सर्वतः।।१९९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
धुत-शृङ्ग-विभिन्नाश्च, खण्डं खण्डं ययुर्घनाः।
श्वासानिलास्ताः शतशो, निपेतुर्नभसोऽचलाः।।२००
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

इति क्रोध - समाध्मातमापतन्तं महाऽसुरम्।
दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं, तद्-बधाय तदाऽकरोत्।।२०१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं, तं बबन्ध महाऽसुरम्।
तत्याज माहिषं रूपं, सोऽपि बद्धो महा-मृधे।।२०२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततः सिंहोऽभवत् सद्यो, यावत् तस्याम्बिका शिरः।
छिनत्ति तावत् पुरुषः, खड्ग-पाणिरदृश्यत।।२०३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तत एवाशु पुरुषं, देवी चिच्छेद सायकैः।
तं खड्ग-चर्मणा सार्धं, ततः सोऽभून्महा-गजः।।२०४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

करेण च महा - सिंहं, तं चकर्ष जगर्ज च।
कर्षतस्तु करं देवी, खड्गेन निरकृन्तत।।२०५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततो महाऽसुरो भूयो, माहिषं वपुरास्थितः।
तथैव क्षोभयामास, त्रैलोक्यं स-चराचरम्।।२०६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततः क्रुद्धा जगन्माता, चण्डिका पानमुत्तमम्।
पपौ पुनः पुनश्चैव, जहासारुण-लोचना।।२०७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ननर्द चासुरः सोऽपि, बल-वीर्य-मदोद्धतः।
विषाणाभ्यां च चिक्षेप, चण्डिकां प्रति भूधरान्।।२०८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सा च तान् प्रहितांस्तेन, चूर्णयन्ती शरोत्करैः।
उवाच तं मदोद्भूत-मुख-रागाकुलाक्षरम्।।२०९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच ।।२१०।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ!, मधु यावत् पिबाम्यहम्।
मया त्वयि हतेऽत्रैव, गर्जिष्यन्त्याशु देवताः।।२११

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।२१२।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवमुक्त्वा समुत्पत्य, साऽऽरूढा तं महाऽसुरम्।
पादेनाक्रम्य कण्ठे च, शूलेनैनमताडयत्।।२१३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः सोऽपि पदाक्रान्तस्तया निज-मुखात् ततः।
अर्ध-निष्क्रान्त एवासीद्, देव्या वीर्येण संवृतः।।२१४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अर्ध-निष्क्रान्त एवासौ, युध्यमानो महाऽसुरः।
तया महाऽसिना देव्या, शिरश्छित्वा निपातितः।।२१५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो हाहा-कृतं सर्वं, दैत्य-सैन्यं ननाश तत्।
प्रहर्षं च परं जग्मुः, सकला देवता-गणाः।।२१६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तुष्टुवुस्तां सुरा-देवीं, सह दिव्यैर्महर्षिभिः।
जगुर्गन्धर्व-पतयो, ननृतुश्चाप्सरो-गणाः।।२१७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वन्दे श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्!
वन्दे जगन्मोहिनीम्!
वन्दे सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्!
वन्दे सर्व-परां शिवां श्रीराज-राजेश्वरीम्!

चतुर्थः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच ।।२१८।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शक्रादयः सुर-गणा, निहतेऽति-वीर्ये, तस्मिन् दुरात्मनि सुरारि-बले च देव्या।
तां तुष्टुवुः प्रणति-नम्र-शिरोधरांसा, वाग्भिः प्रहर्ष-पुलकोद्गम-चारु-देहाः।।२१९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देव्या यया ततमिदं जगदात्म-शक्त्या, निश्शेष-देव-गण-शक्ति-समूह-मूर्त्या।
तामम्बिकामखिल-देव-महर्षि-पूज्याम्, भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः।।२२०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो, ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च।
सा चण्डिकाऽखिल-जगत्-परिपालनाय, नाशाय चाशुभ-भयस्य मतिं करोतु।।२२१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः, पापात्मनां कृत-धियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुल-जन-प्रभवस्य लज्जा, तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि! विश्वम्।।२२२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्, किं चाति-वीर्यमसुर-क्षय-कारि भूरि।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि, सर्वेषु देव्यसुर-देव-गणादिकेषु।।२२३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

हेतुः समस्त-जगतां त्रिगुणाऽपि दोषैर्न ज्ञायसे हरि-हरादिभिरप्यपारा।
सर्वाश्रयाऽखिलमिदं जगंश-भूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या।।२२४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यस्याः समस्त-सुरता समुदीरणेन, तृप्तिं प्रयान्ति सकलेषु मखेषु देवि!
स्वाहाऽसि वै पितृ-गणस्य च तृप्ति-हेतुरुचार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च।।२२५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या मुक्ति-हेतुरविचिन्त्य-महा-व्रता त्वमभ्यस्यसे सु-नियतेन्द्रिय-तत्त्व-सारैः।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्त-समस्त-दोषैर्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवि!।।२२६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शब्दात्मिका सु-विमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथ-रम्य-पद-पाठ-वतां च साम्नाम्।
देवी त्रयी भगवती भव-भावनाय, वार्त्ता च सर्व-जगतां परमार्ति-हन्त्री।।२२७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मेधाऽसि देवि! विदिताऽखिल-शास्त्र-सारा, दुर्गाऽसि दुर्ग-भव-सागर-नौर-सङ्गा।
श्रीः कैटभारि-हृदयैक-कृताधिवासा, गौरी त्वमेव शशि-मौलि-कृत-प्रतिष्ठा।।२२८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ईषत्-सहासममलं परि-पूर्ण-चन्द्र-बिम्बानु-कारि-कनकोत्तम-कान्ति-कान्तम्।
अत्यद्भुतं प्रहृतमाप्त-रुषा तथापि, वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण।।२२९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दृष्ट्वा तु देवि! कुपितं भ्रुकुटी-करालमुद्यच्छशाङ्क-सदृशच्छवि यन्न सद्यः।
प्राणान् मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं, कैर्जीव्यते हि कुपितान्तक-दर्शनेन।।२३०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवि! प्रसीद परमा भवती भवाय, सद्यो विनाशयसि कोप-वती कुलानि।
विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतं बलं सु-विपुलं महिषासुरस्य।।२३१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ते सम्मता जन-पदेषु धनानि तेषां, तेषां यशांसि न च सीदति बन्धु-वर्गः।
धन्यास्त एव निभृतात्मज-भृत्य-दारा, येषां सदाऽभ्युदयदा भवती प्रसन्ना।।२३२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

धर्म्याणि देवि! सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रति-दिनं सुकृती करोति।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवती-प्रसादाल्लोक-त्रयेऽपि फलदा ननु देवि! तेन।।२३३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दुर्गे! स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः, स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि।
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि! का त्वदन्या, सर्वोपकार-करणाय सदाऽऽर्द्र-चित्ता।।२३४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते, कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम्।
संग्राम-मृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु, मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि!।।२३५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म, सर्वासुरानरिषु यत् प्रहिणोषि शस्त्रम्।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्र-पूता, इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽति-साध्वी।।२३६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

खड्ग-प्रभा-निकर-विस्फुरणैस्तथोग्रैः, शूलाग्र-कान्ति-निवहेन दृशोऽसुराणाम्।
यन्नागता विलयमंशुमदिन्दु-खण्ड-योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत्।।२३७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दुर्वृत्त-वृत्त-शमनं तव देवि! शीलं, रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः।
वीर्यं च हन्तृ हृत-देव-पराक्रमाणां, वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्।।२३८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य, रूपं च शत्रु-भय-कार्यति-हारि कुत्र?
चित्ते कृपा समर-निष्ठुरता च दृष्टा, त्वय्येव देवि वरदे! भुवन-त्रयेऽपि।।२३९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपु-नाशनेन, त्रातं त्वया समर-मूर्धनि तेऽपि हत्वा।
नीता दिवं रिपु-गणा भयमप्यपास्तमस्माकमुन्मद-सुरारि-भवं नमस्ते।।२४०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शूलेन पाहि नो देवि! पाहि खड्गेन चाम्बिके!
घण्टा-स्वनेन नः पाहि, चाप-ज्या-निःस्वनेन च।।२४१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च, चण्डिके! रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्म-शूलस्य, उत्तरस्यां तथेश्वरि!।।२४२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सौम्यानि यानि रूपाणि, त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थ-घोराणि, तै रक्षास्मांस्तथा भुवम्।।२४३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

खड्ग-शूल-गदादीनि, यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके!
कर-पल्लव-सङ्गीनि, तैरस्मान् रक्ष सर्वतः।।२४४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।२४५।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः, कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः।
अर्चिता जगतां धात्री, तथा गन्धानुलेपनैः।।२४६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता।
प्राह प्रसाद-सुमुखी, समस्तान् प्रणतान् सुरान्।।२४७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच ।।२४८।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

व्रियतां त्रिदशाः! सर्वे, यदस्मत्तोऽभि-वाञ्छितम्।

दादाम्यहमति-प्रीत्या, स्तवैरेभिः सु-पूजिता।।२४९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवा ऊचुः ।।२५०।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भगवत्या कृतं सर्वं, न किञ्चिदवशिष्यते।

यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः।।२५१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यदि चापि वरो देयस्त्वयाऽस्माकं महेश्वरि!

संस्मृता संस्मृता त्वं नो, हिंसेथाः परमापदः।।२५२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने!

तस्य वित्तर्द्धि-विभवैर्धनं-दारादि-सम्पदाम्।।२५३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वृद्धयेऽस्मत् प्रसन्ना त्वं, भवेथाः सर्वदाऽम्बिके।।२५४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।२५५।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः।
तथेत्युक्त्वा भद्र-काली, बभूवान्तर्हिता नृप!।।२५६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इत्येतत् कथितं भूप!, सम्भूता सा यथा पुरा।
देवी देव-शरीरेभ्यो, जगत्-त्रय-हितैषिणी।।२५७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पुनश्च गौरी-देहात् सा, समुद्भूता यथाऽभवत्।
वधाय दुष्ट-दैत्यानां, तथा शुम्भ-निशुम्भयोः।।२५८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
रक्षणाय च लोकानां, देवानामुप-कारिणी।
तच्छृणुष्व मयाऽऽख्यातं, यथा-वत् कथयामि ते।।२५९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वन्दे श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्!
वन्दे जगन्मोहिनीम्!
वन्दे सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्!
वन्दे सर्व-परां शिवां श्रीराज-राजेश्वरीम्!

पञ्चमः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच ।।२६०।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पुरा शुम्भ-निशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः।
त्रैलोक्यं यज्ञ-भागाश्च, हृता मद-बलाश्रयात्।।२६१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तावेव सूर्यतां तद् - वदधिकारं तथैन्दवम्।
कौबेरमथ याम्यं च, चक्राते वरुणस्य च।।२६२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तावेव पवनर्द्धिं च, चक्रतुर्वह्नि-कर्म च।
ततो देवा विनिर्धूता, भ्रष्ट-राज्याः पराजिताः।।२६३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हृताधिकारास्त्रि-दशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः।
महाऽसुराभ्यां तां देवीं, संस्मरन्त्यपराजिताम्।।२६४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तयाऽस्माकं वरो दत्तो, यथाऽऽपत्सु स्मृताऽखिलाः।
भवतां नाशयिष्यामि, तत्क्षणात् परमापदः।।२६५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

इति कृत्वा मतिं देवा, हिम-वन्तं नगेश्वरम्।

जग्मुस्तत्र ततो देवीं, विष्णु-मायां प्रतुष्टुवुः।।२६६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवा ऊचुः ।।२६७।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

नमो देव्यै महा-देव्यै, शिवायै सततं नमः।

नमः प्रकृत्यै भद्रायै, नियताः प्रणताः स्म ताम्।।२६८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

रौद्रायै नमो नित्यायै, गौर्यै धात्र्यै नमो नमः।

ज्योत्स्नायै चेन्दु-रूपिण्यै, सुखायै सततं नमः।।२६९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै, सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः।

नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै, शर्वाण्यै ते नमो नमः।।२७०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दुर्गायै दुर्ग - पारायै, सारायै सर्व - कारिण्यै।

ख्यात्यै तथैव कृष्णायै, धूम्रायै सततं नमः।।२७१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अति-सौम्याति-रौद्रायै, नतास्तस्यै नमो नमः।

नमो जगत्-प्रतिष्ठायै, देव्यै कृत्यै नमो नमः।।२७२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, विष्णु-मायेति शब्दिता। नमस्तस्यै।।२७३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विष्णु-मायायै नमस्तस्यै।।२७४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विष्णु-मायायै नमस्तस्यै नमो नमः।।२७५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व - भूतेषु, चेतनेत्यभिधीयते। नमस्तस्यै।। २७६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चेतनायै नमस्तस्यै।।२७७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चेतनायै नमस्तस्यै नमो नमः।।२७८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, बुद्धि-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।२७९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
बुद्ध्यै नमस्तस्यै।।२८०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

बुद्ध्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।२८१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या देवी सर्व-भूतेषु, निद्रा-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।२८२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

निद्रायै नमस्तस्यै।।२८३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

निद्रायै नमस्तस्यै नमो नमः।।२८४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या देवी सर्व-भूतेषु, क्षुधा-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।२८५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क्षुधायै नमस्तस्यै।।२८६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क्षुधायै नमस्तस्यै नमो नमः।।२८७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या देवी सर्व-भूतेषु, छाया-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।२८८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

छायायै नमस्तस्यै।।२८९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

छायायै नमस्तस्यै नमो नमः।।२९०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या देवी सर्व-भूतेषु, शक्ति-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।२९१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शक्त्यै नमस्तस्यै।।२९२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शक्त्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।२९३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या देवी सर्व-भूतेषु, तृष्णा-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३९४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तृष्णायै नमस्तस्यै।।२९५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तृष्णायै नमस्तस्यै नमो नमः।।२९६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या देवी सर्व-भूतेषु, क्षान्ति-रूपेण संस्थिता।नमस्तस्यै।।२९७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क्षान्त्यै नमस्तस्यै।।२९८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क्षान्त्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।२९९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या देवी सर्व-भूतेषु, जाति-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३००

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

जात्यै नमस्तस्यै।।३०१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

जात्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।३०२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या देवी सर्व-भूतेषु, लज्जा-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३०३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

लज्जायै नमस्तस्यै।।३०४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
लज्जायै नमस्तस्यै नमो नमः।।३०५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, शान्ति-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३०६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शान्त्यै नमस्तस्यै।।३०७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शान्त्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।३०८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, श्रद्धा-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३०९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
श्रद्धायै नमस्तस्यै।।३१०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
श्रद्धायै नमस्तस्यै नमो नमः।।३११
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, कान्ति-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३१२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कान्त्यै नमस्तस्यै।।३१३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कान्त्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।३१४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, लक्ष्मी-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३१५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
लक्ष्म्यै नमस्तस्यै।।३१६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
लक्ष्म्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।३१७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, वृत्ति-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३१८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वृत्त्यै नमस्तस्यै।।३१९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वृत्त्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।३२०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, स्मृति-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३२१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स्मृत्यै नमस्तस्यै।।३२२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स्मृत्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।३२३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, दया-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३२४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दयायै नमस्तस्यै।।३२५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दयायै नमस्तस्यै नमो नमः।।३२६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, तुष्टि-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३२७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तुष्ट्यै नमस्तस्यै।।३२८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तुष्ट्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।३२९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, मातृ-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३३०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मात्रे नमस्तस्यै।।३३१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मात्रे नमस्तस्यै नमो नमः।।३३२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या देवी सर्व-भूतेषु, भ्रान्ति-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै।।३३३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भ्रान्त्यै नमस्तस्यै।।३३४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भ्रान्त्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।३३५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इन्द्रियाणामधिष्ठात्री, भूतानां चाखिलेषु या।
भूतेषु सततं तस्यै, व्याप्ति-देव्यै नमो नमः।।३३६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चिति-रूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत्। नमस्तस्यै।।३३७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चित्यै नमस्तस्यै।।३३८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चित्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।३३९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्ट-संश्रयात्, तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता।
करोतु सा नः शुभ-हेतुरीश्वरी, शुभानि भद्राण्यभि-हन्तु चापदः।।३४०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
या साम्प्रतं चोद्धत-दैत्य-तापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः, सर्वापदो भक्ति-विनम्र-मूर्त्तिभिः।।३४१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ऋषिरुवाच ।।३४२।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एवं स्तवादि-युक्तानां, देवानां तत्र पार्वती।
स्नातुमभ्याययौ तोये, जाह्नव्या नृप-नन्दन!।।३४३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
साऽब्रवीत् तान् सुरान्, सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का?
शरीर-कोशतश्चास्याः, समुद्भूताऽब्रवीच्छिवा।।३४४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स्तोत्रं ममैतत् क्रियते, शुम्भ-दैत्य-निराकृतैः।
देवैः समेतैः समरे, निशुम्भेन पराजितैः।।३४५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शरीर-कोशाद् यत्-तस्याः, पार्वत्याः निःसृताऽम्बिका।
कौशिकीति समस्तेषु, ततो लोकेषु गीयते।।३४६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्यां विनिर्गतायां तु, कृष्णाऽभूत् साऽपि पार्वती।
कालिकेति समाख्याता, हिमाचल-कृताश्रया।।३४७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततोऽम्बिकां परं रूपं, विभ्राणां सु-मनोहरम्।
ददर्श चण्डो मुण्डश्च, भृत्यौ शुम्भ-निशुम्भयोः।।३४८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता, अतीव सु-मनोहरा।
काऽप्यास्ते स्त्री महा-राज! भासयन्ती हिमाचलम्।।३४९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
नैव तादृक् क्वचिद् रूपं, दृष्टं केनचिदुत्तमम्।
ज्ञायतां काऽप्यसौ देवी, गृह्यतां चासुरेश्वर!।।३५०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स्त्री-रत्नमति-चार्वङ्गी, द्योतयन्ती दिशस्त्विषा।
सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र! तां भवान् द्रष्टुमर्हति।।३५१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यानि रत्नानि मणयो, गजाश्वादीनि वै प्रभो!
त्रैलोक्ये तु समस्तानि, साम्प्रतं भान्ति ते गृहे।।३५२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ऐरावतः समानीतो, गज-रत्नं पुरन्दरात्।
पारिजात-तरुश्चायं, तथैवोच्चैःश्रवा हयः।।३५३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विमान -हंस - संयुक्तमेतत् तिष्ठति तेऽङ्गणे।
रत्न-भूतमिहानीतं, यदासीद् वेधसोऽद्भुतम्।।३५४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
निधिरेष महा-पद्मः, समानीतो धनेश्वरात्।
किञ्जल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लान-पङ्कजाम्।।३५५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
छत्रं ते वारुणं गेहे, काञ्चन-स्रावि तिष्ठति।
तथाऽयं स्यन्दन-वरो, यः पुराऽऽसीत् प्रजा-पतेः।।३५६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मृत्योरुत्क्रान्तिदा नाम, शक्तिरीशः! त्वया हृता।
पाशः सलिल-राजस्य, भ्रातुस्तव परिग्रहे।।३५७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
निशुम्भस्याब्धि-जाताश्च, समस्ता रत्न-जातयः।
वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्नि-शौचे च वाससी।।३५८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एवं दैत्येन्द्र! रत्नानि, समस्तान्याहृतानि ते।
स्त्री-रत्नमेषा कल्याणी, त्वया कस्मान्न गृह्यते।।३५९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ऋषिरुवाच ।।३६०।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

निशम्येति वचः शुम्भः, स तदा चण्ड-मुण्डयोः।
प्रेषयामास सुग्रीवं, दूतं देव्या महाऽसुरम्।।३६१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

इति चेति च वक्तव्या, सा गत्वा वचनान्मम।
यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या, तथा कार्यं त्वया लघु।।३६२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स तत्र गत्वा यत्रास्ते, शैलोद्देशेऽति-शोभने।
सा देवी तां ततः प्राह, श्लक्ष्णं मधुरया गिरा।।३६३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दूत उवाच ।।३६४।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवि! दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः।
दूतोऽहं प्रेषितस्तेन, त्वत्-सकाशमिहागतः।।३६५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अव्याहताज्ञः सर्वासु, यः सदा देव-योनिषु।
निर्जिताखिल-दैत्यारिः, स यदाह शृणुष्व तत्।।३६६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मम त्रैलोक्यमखिलं, मम देवा वशानुगाः।
यज्ञ-भागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक्।।३६७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

त्रैलोक्ये वर-रत्नानि, मम वश्यान्यशेषतः।

तथैव गज-रत्नं च, हृत्वा देवेन्द्र-वाहनम्।।३६८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क्षीरोद-मथनोद्भूतमश्व-रत्नं ममामरैः।

उच्चैःश्रवस-संज्ञं तत्-प्रणिपत्य समर्पितम्।।३६९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यानि चान्यानि देवेषु, गन्धर्वेषूरगेषु च।

रत्न-भूतानि भूतानि, तानि मय्येव शोभने!।।३७०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स्त्री-रत्न-भूतां त्वां देवि! लोके मन्यामहे वयम्।

सा त्वमस्मानुपागच्छ, यतो रत्न-भुजो वयम्।।३७१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मां वा ममानुजं वापि, निशुम्भमुरु-विक्रमम्।

भज त्वं चञ्चलापाङ्गि! रत्न-भूताऽसि वै यतः।।३७२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

परमैश्वर्यमतुलं, प्राप्स्यसे मत्-परिग्रहात्।

एतद् बुद्ध्या समालोच्य, मत्-परिग्रहतां व्रज।।३७३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच।।३७४।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

इत्युक्ता सा तदा देवी, गम्भीरान्तः-स्मिता जगौ।
दुर्गा भगवती भद्रा, ययेदं धार्यते जगत्।।३७५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच।।३७६।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सत्यमुक्तं त्वया नात्र, मिथ्या किञ्चित् त्वयोदितम्।
त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो, निशुम्भश्चापि तादृशः।।३७७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

किं त्वत्र यत् प्रतिज्ञातं, मिथ्या तत् क्रियते कथम्?
श्रूयतामल्प-बुद्धित्वात्, प्रतिज्ञा या कृता पुरा।।३७८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यो मां जयति संग्रामे, यो मे दर्पं व्यपोहति।
यो मे प्रति-बलो लोके, स मे भर्त्ता भविष्यति।।३७९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तदाऽऽगच्छतु शुम्भोऽत्र, निशुम्भो वा महाऽसुरः।
मां जित्वा किं चिरेणात्र, पाणिं गृह्णातु मे लघु।।३८०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दूत उवाच।।३८१।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अवलिप्ताऽसि मैवं त्वं, देवि! ब्रूहि ममाग्रतः।
त्रैलोक्ये कः पुमांस्तिष्ठेदग्रे शुम्भ-निशुम्भयोः।।३८२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अन्येषामपि दैत्यानां, सर्वे देवा न वै युधि।
तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि! किं पुनः स्त्री त्वमेकिका।।३८३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे।
शुम्भादीनां कथं तेषां, स्त्री प्रयास्यसि सम्मुखम्।।३८४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता, पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः।
केशाकर्षण-निर्धूत-गौरवा मा गमिष्यसि।।३८५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देव्युवाच ।।३८६।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एवमेतद् बली शुम्भो, निशुम्भश्चाति-वीर्य-वान्।
किं करोमि प्रतिज्ञा मे, यदनालोचिता पुरा।।३८७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स त्वं गच्छ मयोक्तं ते, यदेतत् सर्वमादृतः।
तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय, स च युक्तं करोतु तत् ।।३८८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

षष्ठः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच।।३८९।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इत्याकर्ण्य वचो देव्याः, स दूतोऽमर्ष-पूरितः।
समाचष्ट समागम्य, दैत्य-राजाय विस्तरात्।।३९०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्य दूतस्य तद्-वाक्यमाकर्ण्याऽसुर-राट् ततः।
स-क्रोधः प्राह दैत्यानामधिपं धूम्र-लोचनम्।।३९१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हे धूम्र -लोचनाशु त्वं, स्व-सैन्य-परिवारितः।
तामानय बलाद् दुष्टां, केशाकर्षण-विह्वलाम्।।३९२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तत्-परित्राणदः कश्चिद्, यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः।
स हन्तव्योऽमरो वापि, यक्षो गन्धर्व एव वा।।३९३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ऋषिरुवाच।।३९४।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं, स दैत्यो धूम्र-लोचनः।
वृतः षष्ट्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ।।३९५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स दृष्ट्वा तां ततो देवीं, तुहिनाचल-संस्थिताम्।
जगादोच्चैः प्रयाहीति, मूलं शुम्भ-निशुम्भयोः।।३९६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
न चेत् प्रीत्याऽद्य भवती, मद्-भर्त्तारमुपैष्यति।
ततो बलान्नयाम्येष, केशाकर्षण-विह्वलाम्।।३९७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देव्युवाच।।३९८।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दैत्येश्वरेण प्रहितो, बल-वान् बल-संवृतः।
बलान्नयसि मामेवं, ततः किं ते करोम्यहम्।।३९९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ऋषिरुवाच।।४००।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इत्युक्तः सोऽभ्यधावत्, तामसुरो धूम्र-लोचनः।
हुङ्कारेणैव तं भस्म, सा चकाराम्बिका ततः।।४०१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अथ क्रुद्धं महा-सैन्यमसुराणां तथाऽम्बिकाम्।
ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्ति-परश्वधैः।।४०२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो धुत-सटः कोपात्, कृत्वा नादं सु-भैरवम्।
पपाताऽसुर-सेनायां, सिंहो देव्याः स्व-वाहनः।।४०३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कांश्चित् कर-प्रहारेण, दैत्यानास्येन चापरान्।
आक्रम्य चाधरेणान्यान्, स जघान महाऽसुरान्।।४०४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
केषाञ्चित् पाटयामास, नखैः कोष्ठानि केशरी।
तथा तल-प्रहारेण, शिरांसि कृत-वान् पृथक्।।४०५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विच्छिन्न-बाहु-शिरसः, कृतास्तेन तथाऽपरे।
पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धूत-केसरः।।४०६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क्षणेन तद्-बलं सर्वं, क्षयं नीतं महात्मना।
तेन केसरिणा देव्या, वाहनेनाति-कोपिना।।४०७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
श्रुत्वा तमसुरं देव्या, निहतं धूम्र-लोचनम्।
बलं च क्षयितं कृत्स्नं, देवी-केसरिणा ततः।।४०८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चुकोप दैत्याधिपतिः, शुम्भः प्रस्फुरिताधरः।
आज्ञापयामास च तौ, चण्ड-मुण्डौ महाऽसुरौ।।४०९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हे चण्ड! हे मुण्ड! बलैर्बहुभिः परिवारितौ।
तत्र गच्छत गत्वा च, सा समानीयतां लघु।।४१०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा, यदि वः संशयो युधि।
तदाऽशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम्।।४११
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्यां हतायां दुष्टायां, सिंहे च विनिपातिते।
शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा, गृहीत्वा तामथाम्बिकाम् ।।४१२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वन्दे श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्!
वन्दे जगन्मोहिनीम्!
वन्दे सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्!
वन्दे सर्व-परां शिवां श्रीराज-राजेश्वरीम्!

सप्तमः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच ।।४१३।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्ड-मुण्ड-पुरो गमाः।
चतुरङ्ग - बलोपेता, ययुरभ्युद्यतायुधाः।।४१४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम्।
सिंहस्योपरि शैलेन्द्र-शृङ्गे महति काञ्चने।।४१५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः।
आकृष्ट-चापाऽसि-धरास्तथाऽन्ये तत्-समीपगाः।।४१६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन् प्रति।
कोपेन चास्या वदनं, मसी-वर्णमभूत् तदा।।४१७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भ्रुकुटी-कुटिलात् तस्या, ललाट-फलकाद् द्रुतम्।
काली कराल-वदना, विनिष्क्रान्ताऽसि-पाशिनी।।४१८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विचित्र-खट्वाङ्ग-धरा, नर-माला-विभूषणा।
द्वीपि-चर्म-परीधाना, शुष्क-मांसाऽति-भैरवा।।४१९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अति-विस्तार-वदना, जिह्वा-ललन-भीषणा।
निमग्नाऽऽरक्त-नयना, नादाऽऽपूरित-दिङ्-मुखा।।४२०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सा वेगेनाभि-पतिता, घातयन्ती महाऽसुरान्।
सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद् बलम्।।४२१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पार्ष्णि-ग्राहांकुश-ग्राहि-योध-घण्टा-समन्वितान्।
समादायैक-हस्तेन, मुखे चिक्षेप वारणान्।।४२२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तथैव योधं तुरगै, रथं सारथिना सह।
निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्यति-भैरवम्।।४२३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एकं जग्राह केशेषु, ग्रीवायामथ चापरम्।
पादेनाक्रम्य चैवाऽन्यमुरसान्यमपोथयत्।।४२४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि, महाऽस्त्राणि तथाऽसुरैः।
मुखेन जग्राह रुषा, दशनैर्मथितान्यपि।।४२५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
बलिनां तद्-बलं सर्वमसुराणां महात्मनाम्।
ममर्दाऽभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाताडयत् तथा।।४२६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
असिना निहताः केचित्, केचित् खट्वाङ्ग-ताडिताः।
जग्मुर्विनाशमसुरा, दन्ताग्राभि-हतास्तथा।।४२७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क्षणेन तद् बलं सर्वमसुराणां निपातितम्।
दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव, तां कालीमति-भीषणाम्।।४२८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शर-वर्षैर्महा-भीमैर्भीमाक्षीं तां महाऽसुरः।
छादयामास चक्रैश्च, मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः।।४२९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तानि चक्राण्यनेकानि, विशमानानि तन्मुखम्।
बभुर्यथाऽर्क-बिम्बानि, सु-बहूनि घनोदरम्।।४३०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो जहासाऽति-रुषा, भीमं भैरव-नादिनी।
काली कराल-वक्त्रान्तर्दुर्दर्श-दशनोज्ज्वला।।४३१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
उत्थाय च महा-सिंहं, देवी चण्डमधावत।
गृहीत्वा चास्य केशेषु, शिरस्तेनासिनाच्छिनत्।।४३२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अथ मुण्डोऽभ्यधावत् तां, दृष्ट्वा चण्डं निपातितम्।
तमप्यपातयद् भूमौ, स खड्गाभि-हतं रुषा।।४३३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हत-शेषं ततः सैन्यं, दृष्ट्वा चण्डं निपातितम्।
मुण्डं च सु-महा-वीर्यं, दिशो भेजे भयातुरम्।।४३४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शिरश्चण्डस्य काली च, गृहीत्वा मुण्डमेव च।
प्राह प्रचण्डाट्टहास-मिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम्।।४३५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मया तवात्रोपहृतौ, चण्ड-मुण्डौ महा-पशू।
युद्ध-यज्ञे स्वयं शुम्भं, निशुम्भं च हनिष्यसि।।४३६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ऋषिरुवाच ।।४३७।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तावानीतौ ततो दृष्ट्वा, चण्ड-मुण्डौ महाऽसुरौ।
उवाच कालीं कल्याणी, ललितं चण्डिका वचः।।४३८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यस्माच्चण्डं च मुण्डं च, गृहीत्वा त्वमुपागता।
चामुण्डेति ततो लोके, ख्याता देवि! भविष्यसि ।।४३९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अष्टमः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच ।।४४०।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चण्डे च निहते दैत्ये, मुण्डे च विनिपातिते।
बहुलेषु च सैन्येषु, क्षयितेष्वसुरेश्वरः।।४४१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः कोप-पराधीन-चेताः शुम्भः प्रताप-वान्।
उद्योगं सर्व-सैन्यानां, दैत्यानामादिदेश ह।।४४२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अद्य सर्व-बलैर्दैत्याः, षडशीतिरुदायुधाः।
कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स-बलैर्वृताः।।४४३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कोटि-वीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै।
शतं कुलानि धौम्राणां, निर्गच्छन्तु ममाज्ञया।।४४४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कालका दौर्हृदा मौर्याः, कालकेयास्तथाऽसुराः।
युद्धाय सज्जा निर्यान्तु, आज्ञया त्वरिता मम।।४४५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इत्याज्ञाप्यासुर-पतिः, शुम्भो भैरव-शासनः।
निर्जगाम महा-सैन्य-सहस्रैर्बहुभिर्वृतः।।४४६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
आयान्तं चण्डिका दृष्ट्वा, तत्-सैन्यमति-भीषणम्।
ज्या-स्वनैः पूरयामास, धरिणी-गगनान्तरम्।।४४७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः सिंहो महा-नादमतीव कृत-वान् नृप!
घण्टा-स्वनेन तं नादमम्बिका चोप-वृंहयत्।।४४८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
धनुर्ज्या-सिंह-घण्टानां, नादापूरित-दिङ्-मुखा।
निनादैर्भीषणैः काली, जिग्ये विस्तारिताननना।।४४९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तं निनादमुप-श्रुत्य, दैत्य-सैन्यैश्चतुर्दिशम्।
देवी सिंहस्तथा काली, स-रोषैः परिवारिताः।।४५०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एतस्मिन्नन्तरे भूप! विनाशाय सुर-द्विषाम्।
भवायामर-सिंहानामति-वीर्य-बलान्विताः।।४५१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ब्रह्मेश-गुह-विष्णूनां, तथेन्द्रस्य च शक्तयः।
शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य, तद्-रूपैश्चण्डिकां ययुः।।४५२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यस्य देवस्य यद्-रूपं, यथा भूषण-वाहनम्।
तद्-वदेव हि तच्छक्तिरसुरान् योद्धुमाययौ।।४५३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हंस-युक्त-विमानाग्रे, साक्ष-सूत्र-कमण्डलुः।
आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साऽभिधीयते।।४५४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
माहेश्वरी वृषारूढा, त्रिशूल-वर-धारिणी।
महाऽहि-वलया प्राप्ता, चन्द्र-रेखा-विभूषणा।।४५५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कौमारी शक्ति-हस्ता च, मयूर-वर-वाहना।
योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुह-रूपिणी।।४५६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरि-संस्थिता।
शङ्ख-चक्र-गदा-शार्ङ्ग-खड्ग-हस्ताभ्युपाययौ।।४५७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यज्ञ-वाराहमतुलं, रूपं या बिभ्रती हरेः।
शक्तिः साप्याययौ तत्र, वाराहीं बिभ्रती तनुम्।।४५८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
नारसिंही नृसिंहस्य, बिभ्रती सदृशं वपुः।
प्राप्ता तत्र सटाक्षेप-क्षिप्त-नक्षत्र-संहतिः।।४५९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वज्र-हस्ता तथैवेन्द्री, गज-राजोपरि-स्थिता।
प्राप्ता सहस्र-नयना, यथा शक्रस्तथैव सा।।४६०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देव - शक्तिभिः।
हन्यन्तामसुराः शीघ्रं, मम प्रीत्याऽऽह चण्डिकाम्।।४६१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो देवी-शरीरात् तु, विनिष्क्रान्ताऽति-भीषणा।
चण्डिका-शक्तिरत्युग्रा, शिवा-शत-निनादिनी।।४६२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सा चाह धूम्र - जटिलमीशानमपराजिता।
दूत! त्वं गच्छ भगवन्! पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः।।४६३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च, दानवावति-गर्वितौ।
ये चान्ये दानवास्तत्र, युद्धाय समुपस्थिताः।।४६४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां, देवाः सन्तु हविर्भुजः।
यूयं प्रयात पातालं, यदि जीवितुमिच्छथ।।४६५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
बलावलेपादथ चेद्, भवन्तो युद्ध-कांक्षिणः।
तदाऽऽगच्छत तृप्यन्तु, मच्छिवाः पिशितेन वः।।४६६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यतो नियुक्तो दौत्येन, तया देव्या शिवः स्वयम्।
शिव-दूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता।।४६७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः, शर्वाख्यातं महाऽसुराः।
अमर्षापूरिता जग्मुर्यत्र कात्यायनी स्थिता।।४६८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः प्रथममेवाग्रे, शर-शक्त्यृष्टि-वृष्टिभिः।
ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः।।४६९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सा च तान् प्रहितान् वाणाञ्छूल-शक्ति-परश्वधान्।
चिच्छेद लीलयाऽऽध्मात-धनुर्मुक्तैर्महेषुभिः।।४७०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्याग्रतस्तथा काली, शूल-पात-विदारितान्।
खट्वाङ्ग-पोथितांश्चारीन्, कुर्वती व्यचरत् तदा।।४७१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कमण्डलु-जलाक्षेप-हत-वीर्यान् हतौजसः।
ब्रह्माणी चाऽकरोच्छत्रून्, येन येन स्म धावति।।४७२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
माहेश्वरी त्रिशूलेन, तथा चक्रेण वैष्णवी।
दैत्याञ्जघान कौमारी, तथा शक्त्याति-कोपना।।४७३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ऐन्द्री कुलिश-पातेन, शतशो दैत्य-दानवाः।
पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां, रुधिरौघ-प्रवर्षिणः।।४७४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तुण्ड-प्रहार-विध्वस्ता, दंष्टाग्र-क्षत-वक्षसः।
वाराह-मूर्त्या न्यपतंश्चक्रेण च विदारिताः।।४७५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
नखैर्विदारितांश्चान्यान्, भक्षयन्ती महाऽसुरान्।
नारसिंही चचाराजौ, नादापूर्ण-दिगम्बरा।।४७६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चण्डाट्ट-हासैरसुराः, शिव-दूत्यभि-दूषिताः।
पेतुः पृथिव्यां पतितांस्तांश्च खादाथ सा तदा।।४७७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इति मातृ-गणं क्रुद्धं, मर्दयन्तं महाऽसुरान्।
दृष्ट्वाऽभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारि-सैनिकाः।।४७८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पलायन-परान् दृष्ट्वा, दैत्यान् मातृ-गणार्दितान्।
योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो, रक्त-वीजो महाऽसुरः।।४७९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
रक्त-बिन्दुर्यदा भूमौ, पतत्यस्य शरीरतः।
समुत्पतति मेदिन्यां, तत्-प्रमाणस्तदाऽसुरः।।४८०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
युयुधे स गदा-पाणिरिन्द्र-शक्त्या महाऽसुरः।
ततश्चैन्द्री स्व-वज्रेण, रक्त-बीजमताडयत्।।४८१
क ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कुलिशेनाहतस्याशु, बहु सुस्राव शोणितम्।
समुत्तस्थुस्ततो, योधास्तद् -रूपास्तत्-पराक्रमाः।।४८२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यावन्तः पतितास्तस्य, शरीराद् रक्त-बिन्दवः।
तावन्तः पुरुषा जातास्तद्-वीर्य-बल-विक्रमाः।।४८३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ते चापि युयुधुस्तत्र, पुरुषा रक्त-सम्भवाः।
समं मातृभिरत्युग्र-शस्त्र-पातातिं-भीषणम्।।४८४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पुनश्च वज्र-पातेन, क्षतमस्य शिरो यदा।
ववाह रक्तं पुरुषास्ततो, जाताः सहस्रशः।।४८५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वैष्णवी समरे चैनं, चक्रेणाभि - जघान ह।
गदया ताडयामास, ऐन्द्री तमसुरेश्वरम्।।४८६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वैष्णवी-चक्र-भिन्नस्य, रुधिर-स्राव-सम्भवैः।
सहस्रशो जगद्-व्याप्तं, तत्-प्रमाणैर्महाऽसुरैः।।४८७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शक्त्या जघान कौमारी, वाराही च तथाऽसिना।
माहेश्वरी त्रिशूलेन, रक्त-वीजं महाऽसुरम्।।४८८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स चापि गदया दैत्यः, सर्वा एवाहनत् पृथक्।
मातृ-कोप-समाविष्टो, रक्त-वीजो महाऽसुरः।।४८९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्याहतस्य बहुधा, शक्ति-शूलादिभिर्भुवि।
पपात् यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः।।४९०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तैश्चासुरासृक्-सम्भूतैरसुरैः सकलं जगत्।
व्याप्तमासीत् ततो देवा, भयमाजग्मुरुत्तमम्।।४९१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तान् विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा, चण्डिका प्राह सत्वरा।
उवाच कालीं चामुण्डे! विस्तीर्णं वदनं कुरु।।४९२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मच्छस्त्र-पात-सम्भूतान्, रक्त-बिन्दून् महाऽसुरान्।
रक्त-बिन्दोः प्रतीच्छ त्वं, वक्त्रेणानेन वेगिना।।४९३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भक्षयन्ती चर रणे, तदुत्पन्नान् महाऽसुरान्।
एवमेष क्षयं दैत्यः, क्षीण-रक्तो गमिष्यति।।४९४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा, न चोत्पत्स्यन्ति चापरे।
इत्युक्त्वा तां ततो देवी, शूलेनाभि-जघान तम्।।४९५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मुखेन काली जगृहे, रक्त-बीजस्य शोणितम्।।४९६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततोऽसावाजघानाथ, गदया तत्र चण्डिकाम्।
न चास्या वेदना चक्रे, गदा-पातोऽल्पिकामपि।।४९७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्याहतस्य देहात् तु, बहु सुस्राव शोणितम्।
यतस्ततस्तद्-वक्त्रेण, चामुण्डा सम्प्रतीच्छति।।४९८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मुखे समुद्गता येऽस्या, रक्त-पातान् महाऽसुराः।
तांश्च खादाथ चामुण्डा, पपौ तस्य च शोणितम्।।४९९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देवी शूलेन वज्रेण, बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः।
जघान रक्त-बीजं तं, चामुण्डा-पीत-शोणितम्।।५००
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स पपात मही-पृष्ठे, शस्त्र-सङ्घ-समाहतः।
नीरक्तश्च मही-पाल! रक्त-बीजो महाऽसुरः।।५०१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप!
तेषां मातृ-गणो जातो, ननर्तासृङ्-मदोद्धतः।।५०२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

नवमः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ॐ राजोवाच।।५०३।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

विचित्रमिदमाख्यातं, भगवन्! भवता मम।
देव्याश्चरित-माहात्म्यं, रक्त-वीज-बधाश्रितम्।।५०४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं, रक्त-बीजे निपातिते।
चकार शुम्भो यत् कर्म, निशुम्भश्चाति-कोपनः।।५०५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।५०६।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

चकार कोपमतुलं, रक्त-बीजे निपातिते।
शुम्भासुरो निशुम्भश्च, हतेष्वन्येषु चाहवे।।५०७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

हन्य-मानं महा-सैन्यं, विलोक्यामर्षमुद्-वहन्।
अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ, मुख्ययाऽसुर-सेनया।।५०८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे, पार्श्वयोश्च महाऽसुराः।
सन्दष्टौष्ठ-पुटाः क्रुद्धा, हन्तुं देवीमुपाययुः।।५०९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
आजगाम महा-वीर्यः, शुम्भोऽपि स्व-बलैर्वृतः।
निहन्तुं चण्डिकां कोपात्, कृत्वा युद्धं तु मातृभिः।।५१०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो युद्धमतीवासीद्, देव्या शुम्भ-निशुम्भयोः।
शर-वर्षमतीवोग्रं, मेघयोरिव वर्षतोः।।५११
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चिच्छेदास्ताञ्छरांस्ताभ्यां, चण्डिका स्व-शरोत्करैः।
ताडयामास चाङ्गेषु, शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ।।५१२
क ए ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
निशुम्भो निशितं खड्गं, चर्म चादाय सुप्रभम्।
अताडयन् मूर्ध्नि सिंहं, देव्या वाहनमुत्तमम्।।५१३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ताडिते वाहने देवी, क्षुरप्रेणासिमुत्तमम्।
निशुम्भस्याशु चिच्छेद, चर्म चाप्यष्ट-चन्द्रकम्।।५१४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
छिन्ने चर्मणि खड्गे च, शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः।
तामप्यस्य द्विधा चक्रे, चक्रेणाभि-मुखागताम्।।५१५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ, शूलं जग्राह दानवः।
आयातं मुष्टि-पातेन, देवी तच्चाप्यचूर्णयत्।।५१६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
आविध्याथ गदां सोऽपि, चिक्षेप चण्डिकां प्रति।
साऽपि देव्या त्रिशूलेन, भिन्ना भस्मत्वमागता।।५१७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः परशु-हस्तं तमायान्तं दैत्य-पुङ्गवम्।
आहत्य देवी वाणौघैरपातयत भू-तले।।५१८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्मिन् निपतिते भूमौ, निशुम्भे भीम-विक्रमे।
भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः, प्रययौ हन्तुमम्बिकाम्।।५१९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स रथस्थस्तथाऽत्युच्चैर्गृहीत-परमायुधैः।
भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ नभः।।५२०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तमायान्तं समालोक्य, देवी शङ्खमवादयत्।
ज्या-शब्दं चापि धनुषश्चकारातीव-दुःसहम्।।५२१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पूरयामास ककुभो, निज-घण्टा-स्वनेन च।
समस्त-दैत्य-सैन्यानां, तेजो-वध-विधायिना।।५२२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः सिंहो महा-नादैस्त्याजितेभ-महा-मदैः।
पूरयामास गगनं, गां तथैव दिशो दश।।५२३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः काली समुत्पत्य, गगनं क्ष्मामताडयत्।
कराभ्यां तन्निनादेन, प्राक्-स्वनास्ते तिरोहिताः।।५२४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अट्टाट्ट - हासमशिवं, शिव - दूती चकार ह।
तैः शब्दैरसुरास्त्रेसुः, शुम्भः कोपं परं ययौ।।५२५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दुरात्मंस्तिष्ठ तिष्ठेति, व्याजहाराम्बिका यदा।
तदा जयेत्यभिहितं, देवैराकाश-संस्थितैः।।५२६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालाति-भीषणा।
आयान्ती वह्नि-कूटाभा, सा निरस्ता महोल्कया।।५२७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सिंह-नादेन शुम्भस्य, व्याप्तं लोक-त्रयान्तरम्।
निर्घात-निःस्वनो घोरो, जितवानवनी-पते!।।५२८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शुम्भ-मुक्ताञ्छरान् देवी, शुम्भस्तत् प्रहिताञ्छरान्।
चिच्छेद स्व-शरैरुग्रैः, शतशोऽथ सहस्रशः।।५२९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः सा चण्डिका क्रुद्धा, शूलेनाभि-जघान तम्।
स तथाऽभिहतो भूमौ, मूर्छितो निपपात ह।।५३०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो निशुम्भः सम्प्राप्य, चेतनामात्त-कार्मुकः।
आजघान शरैर्देवीं, कालीं केशरिणं तथा।।५३१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः।
चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम्।।५३२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो भगवती क्रुद्धा, दुर्गा दुर्गार्ति-नाशिनी।
चिच्छेद तानि चक्राणि, स्व-शरैः सायकांश्च तान्।।५३३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो निशुम्भो वेगेन, गदामादाय चण्डिकाम्।
अभ्यधावत वै हन्तुं, दैत्य-सेना-समावृतः।।५३४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्यापतत एवाशु, गदां चिच्छेद चण्डिका।
खड्गेन शित-धारेण, स च शूलं समाददे।।५३५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शूल-हस्तं समायान्तं, निशुम्भममरार्दनम्।
हृदि विव्याध शूलेन, वेगाविद्धेन चण्डिका।।५३६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भिन्नस्य तस्य शूलेन, हृदयान्निःसृतोऽपरः।
महा-बलो महा-वीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन्।।५३७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्य निष्क्रामतो देवी, प्रहस्य स्वनवत् ततः।
शिरश्चिच्छेद खड्गेन, ततोऽसावपतद् भुवि।।५३८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः सिंहश्चखादोग्रं, दंष्ट्रा क्षुण्ण-शिरोधरान्।
असुरांस्तांस्तथा काली, शिव-दूती तथाऽपरान्।।५३९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कौमारी-शक्ति-निर्भिन्नाः, केचिन्नेशुर्महाऽसुराः।
ब्रह्माणी-मन्त्र-पूतेन, तोयेनान्ये निराकृताः।।५४०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
माहेश्वरी-त्रिशूलेन, भिन्नाः पेतुस्तथाऽपरे।
वाराही-तुण्ड-घातेन, केचिच्चूर्णी-कृता भुवि।।५४१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
खण्डं खण्डं च चक्रेण, वैष्णव्या दानवाः कृताः।
वज्रेण चैन्द्री-हस्ताग्र-विमुक्तेन तथाऽपरे।।५४२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
केचिद् विनेशुरसुराः, केचिन्नष्टा महाऽऽहवात्।
भक्षिताश्चापरे काली, शिव-दूती-मृगाधिपैः।।५४३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दशमः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच ।।५४४।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा, भ्रातरं प्राण-सम्मितम्।
हन्य-मानं बलं चैव, शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद् वचः।।५४५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
बलावलेपाद् दुष्टे! त्वं, मा दुर्गे! गर्वमावह।
अन्यासां बलमाश्रित्य, युद्ध्यसे याति-मानिनी।।५४६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देव्युवाच ।।५४७।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एकैवाऽहं जगत्यत्र, द्वितीया का ममापरा।
पश्यैता दुष्ट! मय्येव, विशन्त्यो मद्-विभूतयः।।५४८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः समस्तास्ता देव्यो, ब्रह्माणी-प्रमुखा लयम्।
तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत् तदाऽम्बिका।।५४९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच ।।५५०।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदास्थिता।
तत्-संहृतं मयैकैव, तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव।।५५१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।५५२।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततः प्रववृते युद्धं, देव्याः शुम्भस्य चोभयोः।
पश्यतां सर्व-देवानामसुराणां च दारुणम्।।५५३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शर-वर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः।
तयोर्युद्धमभूद् भूयः, सर्व-लोक-भयङ्करम्।।५५४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दिव्यान्यस्त्राणि शतशो, मुमुचे यान्यथाऽम्बिका।
बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्-प्रतीघात-कर्तृभिः।।५५५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मुक्तानि तेन चास्त्राणि, दिव्यानि परमेश्वरी।
बभञ्ज लीलयैवोग्र-हुङ्कारोच्चारणादिभिः।।५५६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः शर-शतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः।
साऽपि तत्-कुपिता देवी, धनुश्चिच्छेद चेषुभिः।।५५७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे।
चिच्छेद देवी चक्रेण, तामप्यस्य करे स्थिताम्।।५५८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः खड्गमुपादाय, शत-चन्द्रं च भानु-मत्।
अभ्यधावत् तदा देवीं, दैत्यानामधिपेश्वरः।।५५९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्यापतत एवाशु, खड्गं चिच्छेद चण्डिका।
धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्क-करामलम्।।५६०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्न-धन्वा वि-सारथिः।
जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिका-निधनोद्यतः।।५६१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चिच्छेदापततस्तस्य, मुद्गरं निशितैः शरैः।
तथापि सोऽभ्यधावत् तां, मुष्टिमुद्यम्य वेग-वान्।।५६२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स मुष्टिं पातयामास, हृदये दैत्य-पुङ्गवः।
देव्यास्तं चापि सा देवी, तलेनोरस्यताडयत्।।५६३
क-ए ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तल-प्रहाराभि-हतो, निपपात मही-तले।
स दैत्य-राजः सहसा, पुनरेव तथोत्थितः।।५६४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः।
तत्रापि सा निराधारा, युयुधे तेन चण्डिका।।५६५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम्।
चक्रतुः प्रथमं सिद्ध-मुनि-विस्मय-कारकम्।।५६६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो नियुद्धं सु-चिरं, कृत्वा तेनाम्बिका सह।
उत्पात्य भ्रामयामास, चिक्षेप धरणी-तले।।५६७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य, मुष्टिमुद्यम्य वेगितः।
अभ्यधावत दुष्टात्मा, चण्डिका-निधनेच्छया।।५६८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तमायान्तं ततो देवी, सर्व-दैत्य-जनेश्वरम्।
जगत्यां पातयामास, भित्वा शूलेन वक्षसि।।५६९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स गतासुः पपातोर्व्यां, देवी-शूलाग्र-विक्षतः।
चालयन् सकलां पृथिवीं, साब्धि-द्वीपां स-पर्वताम्।।५७०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः प्रसन्नमखिलं, हते तस्मिन् दुरात्मनि।
जगत् स्वास्थ्यमतीवाप, निर्मलं चाभवन्नभः।।५७१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
उत्पात-मेघाः सोल्का ये, प्रागासंस्ते शमं ययुः।
सरितो मार्ग-वाहिन्यस्तथाऽऽसंस्तत्र पातिते।।५७२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो देव-गणाः सर्वे, हर्ष-निर्भर-मानसाः।
बभूवुर्निहते तस्मिन्, गन्धर्वा ललितं जगुः।।५७३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरो-गणाः।।५७४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ववुः पुण्यास्तथा वाताः, सुप्रभोऽभूद् दिवाकरः।
जज्वलुश्चाग्नयः शान्ताः, शान्ता दिग्-जनित-स्वनाः।।५७५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वन्दे श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्!
वन्दे जगन्मोहिनीम्!
वन्दे सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्!
वन्दे सर्व-परां शिवां श्रीराज-राजेश्वरीम्!

एकादशः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच।।५७६।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देव्या हते तत्र महाऽसुरेन्द्रे, सेन्द्राः सुरा वह्नि-पुरो-गमास्ताम्।
कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्ट-लाभाद्, विकाशि-वक्त्राब्ज-विकाशिताशाः।।५७७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देवि! प्रपन्नार्ति-हरे! प्रसीद, प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि! पाहि विश्वं, त्वमीश्वरी देवि! चराचरस्य।।५७८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
आधार-भूता जगतस्त्वमेका, मही-स्वरूपेण यतः स्थिताऽसि।
अपां स्वरूप-स्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलंघ्य-वीर्ये!।।५७९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्त-वीर्या, विश्वस्य बीजं परमाऽसि माया।
सम्मोहितं देवि! समस्तमेतत्, त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति-हेतुः।।५८०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विद्याः समस्तास्तव देवि! भेदाः, स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्, का ते स्तुतिः स्तव्य-परा परोक्तिः।।५८१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सर्व-भूता यदा देवी, स्वर्ग-मुक्ति-प्रदायिनी।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा, भवन्तु परमोक्तयः।।५८२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सर्वस्य बुद्धि-रूपेण, जनस्य हृदि संस्थिते!
स्वर्गापवर्गदे देवि! नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५८३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कला-काष्ठादि-रूपेण, परिणाम-प्रदायिनि!
विश्वस्योपरतौ शक्ते! नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५८४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सर्व-मङ्गल-मङ्गल्ये! शिवे! सर्वार्थ-साधिके!
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि! नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५८५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सृष्टि-स्थिति-विनाशानां, शक्ति-भूते सनातनि!
गुणाश्रये गुण-मये! नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५८६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शरणागत - दीनार्त - परित्राण - परायणे!
सर्वस्यार्त्ति-हरे देवि! नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५८७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हंस-युक्त-विमानस्थे, ब्रह्माणी-रूप-धारिणि!
कौशाम्भः-क्षरिके देवि! नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५८८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
त्रिशूल-चन्द्राहि-धरे, महा-वृषभ-वाहिनि!
माहेश्वरी-स्वरूपेण, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५८९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मयूर-कुक्कुट-वृते, महा-शक्ति-धरेऽनघे!
कौमारी-रूप-संस्थाने, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५९०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शङ्ख - चक्र - गदा - शार्ङ्ग - गृहीत - परमायुधे!
प्रसीद वैष्णवी-रूपे, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५९१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
गृहीतोग्र-महा-चक्रे, दंष्ट्रोद्धृत-वसुन्धरे।
वराह-रूपिणि शिवे! नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५९२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
नृसिंह-रूपेणोग्रेण, हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे!
त्रैलोक्य-त्राण-सहिते, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५९३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
किरीटिनि महा-वज्रे, सहस्र-नयनोज्ज्वले!
वृत्र-प्राण-हरे चैन्द्रि, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५९४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शिव-दूती-स्वरूपेण, हत-दैत्य-महा-बले!
घोर-रूपे महा-रावे, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५९५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दंष्ट्रा कराल-वदने, शिरो-माला-विभूषणे!
चामुण्डे मुण्ड-मथने, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५९६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
लक्ष्मि लज्जे महा-विद्ये, श्रद्धे पुष्टि-स्वधे ध्रुवे!
महा-रात्रि महा-माये, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५९७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मेधे सरस्वति वरे, भूति बाभ्रवि तामसि!
नियते त्वं प्रसीदेशे, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।५९८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सर्व-स्वरूपे सर्वेशे! सर्व-शक्ति-समन्विते!
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि! दुर्गे देवि! नमोऽस्तु ते।।५९९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एतत् ते वदनं सौम्यं, लोचन-त्रय -भूषितम्।
पातु नः सर्व-भीतिभ्यः, कात्यायनि! नमोऽस्तु ते।।६००
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ज्वाला - करालमत्युग्रमशेषासुर - सूदनम्।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि! नमोऽस्तु ते।।६०१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हिनस्ति दैत्य-तेजांसि, स्वनेनापूर्य या जगत्।
सा घण्टा पातु नो देवि! पापेभ्योऽनः सुतानिव।।६०२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

असुरासृग्-वसा-पङ्क-चर्चितस्ते करोज्ज्वलः।
शुभाय खड्गो भवतु, चण्डिके! त्वां नता वयम्।।६०३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा, रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां, त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति।।६०४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एतत् कृतं यत् कदनं त्वयाऽद्य, धर्म-द्विषां देवि! महाऽसुराणाम्।
रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्म-मूर्तिम्, कृत्वाऽम्बिके! तत् प्रकरोति काऽन्या।।६०५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

विद्यासु शास्त्रेषु विवेक-दीपेष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या?
ममत्व-गर्तेऽति-महान्धकारे, विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम्।।६०६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

रक्षांसि यत्रोग्र-विषाश्च नागा, यत्रारयो दस्यु-बलानि यत्र।
दावानलो यत्र तथाऽब्धि-मध्ये, तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम्।।६०७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

विश्वेश्वरि! त्वं परिपासि विश्वं, विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्।
विश्वेश-वन्द्या भवती भवन्ति, विश्वाश्रया ये त्वयि भक्ति-नम्राः।।६०८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवि! प्रसीद परिपालय नोऽरि-भीते-
र्नित्यं यथाऽसुर-वधादधुनैव सद्यः।

पापानि सर्व-जगतां प्रशमं नयाशु,
उत्पात-पाक-जनितांश्च महोप-सर्गान्।।६०९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

प्रणतानां प्रसीद त्वं, देवि! विश्वार्ति-हारिणि!
त्रैलोक्य-वासिनामीड्ये, लोकानां वरदा भव।।६१०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच ।।६११।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वरदाऽहं सुर - गणा!, वरं यन्मनसेच्छथ।
तं वृणुध्वं प्रयच्छामि, जगतामुप-कारकम्।।६१२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवा ऊचुः।।६१३।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सर्वा-बाधा-प्रशमनं, त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि!
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्-वैरि-विनाशनम्।।६१४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच ।।६१५।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते, अष्टा-विंशतिमे युगे।
शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महाऽसुरौ।।६१६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
नन्द-गोप-गृहे जाता, यशोदा-गर्भ-सम्भवा।
ततस्तौ नाशयिष्यामि, विन्ध्याचल-निवासिनी।।६१७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पुनरप्यति - रौद्रेण, रूपेण पृथिवी - तले।
अवतीर्य हनिष्यामि, वैप्रचित्तांस्तु दानवान्।।६१८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान्, वैप्रचित्तान् महाऽसुरान्।
रक्त-दन्ता भविष्यन्ति, दाडिमी-कुसुमोपमाः।।६१९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो मां देवताः सर्वे, मर्त्य-लोके च मानवाः।
स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति, सततं रक्त-दन्तिकाम्।।६२०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भूयश्च शत-वार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि।
मुनिभिः संस्तुता भूमौ, सम्भविष्याम्ययोनिजा।।६२१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः शतेन नेत्राणां, निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन्।
कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः, शताक्षीमिति मां ततः।।६२२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततोऽहमखिलं लोकमात्म-देह-समुद्भवैः।
भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राण-धारकैः।।६२३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शाकम्भरीति विख्यातिं, तदा यास्याम्यहं भुवि।
तत्रैव च वधिष्यामि, दुर्गमाख्यं महाऽसुरम्।।६२४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दुर्गा-देवीति विख्यातं, तन्मे नाम भविष्यति।
पुनश्चाहं यदा भीमं, रूपं कृत्वा हिमाचले।।६२५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
रक्षांसि भक्षयिष्यामि, मुनीनां त्राण-कारणात्।
तदा मां मुनयः सर्वे, स्तोष्यन्त्यानम्र-मूर्तयः।।६२६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भीमा-देवीति विख्यातं, तन्मे नाम भविष्यति।
यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये, महा-बाधां करिष्यति।।६२७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तदाऽहं भ्रामरं रूपं, कृत्वाऽसंख्येय-षट्-पदम्।
त्रैलोक्यस्य हितार्थाय, वधिष्यामि महाऽसुरम्।।६२८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः।।६२९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इत्थं यदा यदा बाधा, दानवोत्था भविष्यति।
तदा तदाऽवतीर्याऽहं, करिष्याम्यरि-संक्षयम्।।६३०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

द्वादशः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ देव्युवाच ।।६३१।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एभिः स्तवैश्च मां नित्यं, स्तोष्यते यः समाहितः।
तस्याऽहं सकलां बाधां, नाशयिष्याम्यसंशयम्।।६३२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मधु - कैटभ - नाशं च, महिषासुर - घातनम्।
कीर्तयिष्यन्ति ये तद्-वद्, वधं शुम्भ-निशुम्भयोः।।६३३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां, नवम्यां चैक-चेतसः।
श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या, मम माहात्म्यमुत्तमम्।।६३४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद्, दुष्कृतोत्था न चापदः।
भविष्यति न दारिद्र्यं, न चैवेष्ट-वियोजनम्।।६३५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शत्रुतो न भयं तस्य, दस्युतो वा न राजतः।
न शस्त्रानल-तोयौघात्, कदाचित् सम्भविष्यति।।६३६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं, पठितव्यं समाहितैः।
श्रोतव्यं च सदा भक्त्या, परं स्वस्त्ययनं हि तत्।।६३७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

उपसर्गानशेषांस्तु, महा-मारी-समुद्भवान्।
तथा त्रिविधमुत्पातं, माहात्म्यं शमयेन्मम।।६३८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यत्रैतत् पठ्यते सम्यङ्, नित्यमायतने मम।
सदा न तद् विमोक्ष्यामि, सान्निध्यं तत्र मे स्थितम्।।६३९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

बलि - प्रदाने पूजायामग्नि - कार्ये महोत्सवे।
सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च।।६४०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

जानताऽजानता वापि, बलि-पूजां तथा कृताम्।
प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या, वह्नि-होमं तथा कृतम्।।६४१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शरत्-काले महा-पूजा, क्रियते या च वार्षिकी।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं, श्रुत्वा भक्ति-समन्वितः।।६४२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सर्वा-बाधा-विनिर्मुक्तो, धन-धान्य-सुतान्वितः।
मनुष्यो मत्-प्रसादेन, भविष्यति न संशयः।।६४३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं, तथा चोत्पत्तयः शुभाः।
पराक्रमं च युद्धेषु, जायते निर्भयः पुमान्।।६४४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
रिपवः संक्षयं यान्ति, कल्याणं चोप-पद्यते।
नन्दते च कुलं पुंसां, माहात्म्यं मम श्रृण्वताम्।।६४५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शान्ति-कर्मणि सर्वत्र, तथा दुःस्वप्न-दर्शने।
ग्रह-पीडासु चोग्रासु, माहात्म्यं श्रृणुयान्मम।।६४६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
उप-सर्गाः शमं यान्ति, ग्रह-पीडाश्च दारुणाः।
दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं, सु-स्वप्नमुप-जायते।।६४७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
बाल-ग्रहाभि-भूतानां, बालानां शान्ति-कारकम्।
सङ्घात-भेदे च नृणां, मैत्री-करणमुत्तमम्।।६४८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दुर्वृत्तानामशेषाणां, बल - हानि - करं करम्।
रक्षो-भूत-पिशाचानां, पठनादेव नाशनम्।।६४९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सर्वं ममैतन्माहात्म्यं, मम सन्निधि-कारकम्।
पशु-पुष्पार्घ्य-धूपैश्च, गन्ध-दीपैस्तथोत्तमैः।।६५०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

विप्राणां भोजनैर्होमैः, प्रोक्षणीयैरहर्निशम्।
अन्यैश्च विविधैर्भोगैः, प्रदानैर्वत्सरेण या।।६५१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

प्रीतिर्मे क्रियते साऽस्मिन्, सुकृत् सुचरिते श्रुते।
श्रुतं हरति पापानि, तथाऽऽरोग्यं प्रयच्छति।।६५२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

रक्षां करोति भूतेभ्यो, जन्मनां कीर्तनं मम।
युद्धेषु चरितं यन्मे, दुष्ट-दैत्य-निबर्हणम्।।६५३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तस्मिञ्छ्रुते वैरि-कृतं, भयं पुंसां न जायते।
युष्माभिः स्तुतयो याश्च, याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः।।६५४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु, प्रयच्छन्ति शुभां मतिम्।
अरण्ये प्रान्तरे वापि, दावाग्नि-परि-वारितः।।६५५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दस्युभिर्वा वृतः शून्ये, गृहीतो वापि शत्रुभिः।
सिंह-व्याघ्रानु-यातो वा, वने वा वन-हस्तिभिः।।६५६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

राजा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो, वध्यो बन्ध-गतोऽपि वा।
आघूर्णितो वा वातेन, स्थितः पोते महार्णवे।।६५७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

पतत्सु चापि शस्त्रेषु, संग्रामे भृश-दारुणे।
सर्वा-बाधासु घोरासु, वेदनाऽभ्यर्दितोऽपि वा।।६५८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स्मरन् ममैतच्चरितं, नरो मुच्येत सङ्कटात्।।६५९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मम प्रभावात् सिंहाद्या, दस्यवो वैरिणस्तथा।
दूरादेव पलायन्ते, स्मरतश्चरितं मम।।६६०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच।।६६१।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

इत्युक्त्वा सा भगवती, चण्डिका चण्ड-विक्रमा।
पश्यतामेव देवानां, तत्रैवान्तरधीयत।।६६२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तेऽपि देवा निरातङ्काः, स्वाधिकारान् यथा पुरा।
यज्ञ-भाग-भुजः सर्वे, चक्रुर्विनिहतारयः।।६६३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दैत्याश्च देव्या निहते, शुम्भे देव-रिपौ युधि।
जगद्-विध्वंसिनि तस्मिन्, महोग्रेऽतुल-विक्रमे।।६६४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
निशुम्भे च महा-वीर्ये, शेषाः पातालमाययुः।।६६५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एवं भगवती देवी, सा नित्याऽपि पुनः पुनः।
सम्भूय कुरुते भूप! जगतः परि-पालनम्।।६६६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तयैतन्मोह्यते विश्वं, सैव विश्वं प्रसूयते।
सा याचिता च विज्ञानं, तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति।।६६७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
व्याप्तं तयैतत् सकलं, ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर!
महा-काल्या महा-काले, महा-मारी-स्वरूपया।।६६८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सैव काले महा-मारी, सैव सृष्टिर्भवत्यजा।
स्थितिं करोति भूतानां, सैव काले सनातनी।।६६९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भव-काले नृणां सैव, लक्ष्मीर्वृद्धि-प्रदा गृहे।
सैवाऽभावे तथाऽलक्ष्मीर्विनाशायोप-जायते।।६७०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स्तुता सम्पूजिता पुष्पैर्धूप-गन्धादिभिस्तथा।
ददाति वित्तं पुत्रांश्च, मतिं धर्मे गतिं शुभाम्।।६७१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

त्रयोदशः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच।।६७२।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एतत् ते कथितं भूप! देवी-माहात्म्यमुत्तमम्।
एवं प्रभावा सा देवी, ययेदं धार्यते जगत्।।६७३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विद्या तथैव क्रियते, भगवद्-विष्णु-मायया।।६७४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तया त्वमेष वैश्यश्च, तथैवान्ये विवेकिनः।
मोह्यन्ते मोहिताश्चैव, मोहमेष्यन्ति चापरे।।६७५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तामुपैहि महाराज! शरणं परमेश्वरीम्।
आराधिता सैव नृणां, भोग-स्वर्गापवर्गदा।।६७६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मार्कण्डेय उवाच।।६७७।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इति तस्य वचः श्रुत्वा, सुरथः स नराधिपः।
प्रणिपत्य महा-भागं, तम् ऋषिं शंसित-व्रतम्।।६७८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

निर्विण्णोऽति-ममत्वेन, राज्यापहरणेन च।

जगाम सद्यस्तपसे, स च वैश्यो महा-मुने!।।६७९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सन्दर्शनार्थमम्बाया, नदी-पुलिन-संस्थितः।

त च वैश्यस्तपस्तेपे, देवी-सूक्तं परं जपन्।।६८०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः, कृत्वा मूर्तिं मही-मयीम्।

अर्हणां चक्रतुस्तस्याः, पुष्प-धूपाग्नि-तर्पणैः।।६८१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

निराहारौ यताहारौ, तन्मनस्कौ समाहितौ।

ददतुस्तौ बलिं चैव, निज-गात्रासृगुक्षितम्।।६८२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवं समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः।

परितुष्टा जगद्धात्री, प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका।।६८३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच ।।६८४।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यत् प्रार्थ्यते त्वया भूप! त्वया च कुल-नन्दन!

मत्तस्तत् प्राप्यतां सर्वं, परि-तुष्टा ददामि तत्।।६८५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मार्कण्डेय उवाच।।६८६।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततौ वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्य-जन्मनि।।६८७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अत्रैव च निजं राज्यं, हत-शत्रु-बलं बलात्।।६८८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं, वव्रे निर्विण्ण-मानसः।

ममेत्यहमिति प्राज्ञः, सङ्ग-विच्युति-कारकम्।।६८९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच।।६९०।।

करोतु सा नः शुभ-हेतुरीश्वरी, शुभानि भद्राण्यभि-हन्तु चापदः।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स्वल्पैरहोभिर्नृपते! स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान्।।६९१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

हत्वा रिपूनस्खलितं, तव तत्र भविष्यति।।६९२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मृतश्च भूयः सम्प्राप्य, जन्म देवाद् विवस्वतः।।६९३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सावर्णिको नाम मनुर्भवान् भुवि भविष्यति।।६९४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वैश्य-वर्य! त्वया यश्च, वरोऽस्मत्तोऽभि-वाञ्छितः।।६९५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै, तव ज्ञानं भविष्यति।।६९६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मार्कण्डेय उवाच।।६९७।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इति दत्वा तयोर्देवी, यथाऽभिलषितं वरम्।
बभूवाऽन्तर्हिता सद्यो, भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता।।६९८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एवं देव्या वरं लब्ध्वा, सुरथः क्षत्रियर्षभः।।६९९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सूर्याज्जन्म समासाद्य, सावर्णिर्भविता मनुः।।७००
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एवं देव्या वरं लब्ध्वा, सुरथः क्षत्रियर्षभः।
सूर्याज्जन्म समासाद्य, सावर्णिर्भविता मनुः।।७०१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

★★★

उक्त प्रकार से श्रीदुर्गा-सप्तशती का 'त्रि-कूटों' से 'सम्पुटित पाठ' करने के बाद एक बार पुनः 'विनियोगादि' करना चाहिए और फिर 'क्षमा-प्रार्थना' एवं 'पाठ-समर्पण' करना चाहिए। यथा–

क्षमा-प्रार्थना

ॐ यदक्षर-परि-भ्रष्टं, मात्रा-हीनं तु यद् भवेत्।
तत् सर्वं क्षम्यतां देवि!, प्रसीद परमेश्वरि!।।

क

कञ्ज-मनोहर-पाद - चलन्मणि - नूपुर - हंस - विराजिते,
कञ्ज-भवादि-सुरौघ-परिष्टुत-लोक-विसृत्वर-वैभवे!
मञ्जुल-वाङ्मय-निर्जित-कीर-कुले, चल-राज-सुकन्यके,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।१।।

ए

एण - धरोज्ज्वल - फाल - तलोल्लसदैण-मदाङ्क-समन्विते,
शोण-पराग-विचित्रित-कन्दुक-सुन्दर-सुस्तन-शोभिते!
नील-पयोधर-काल-सुकुन्तल-निर्जित-भृङ्ग-कदम्बके,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।२।।

ई

ईति-विनाशिनि, भीति-निवारिण, दानव-हन्त्रि, दया-परे,
शीत-कराङ्कित-रत्न-विभूषित-हेम-किरीट-समन्विते!
दीप्त-तरायुध-भण्ड-महाऽसुर-गर्व-निहन्त्रि, पुराऽम्बिके,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।३।।

ल

लब्ध-वरेण जगत् - त्रय - मोहन - दक्ष - लतान्त-महेषुणा,
लब्ध-मनोहर-साल-निषण्ण-सुदेह भुवा परि-पूजिते,
लंघित-शासन दानव-नाशन दक्ष-महायुध-राजिते,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।४।।

ह्रीं

ह्रींपद-भूषित पञ्च - दशाक्षर षोडश - वर्ण - सुदेवते,
ह्रींमति हादि-महा-मनु-मन्दिर-रत्न-विनिर्मित-दीपिके!
हस्ति - वरानन - दर्शित-युद्ध-समादर-साहस-तोषिते,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।५।।

ह

हस्त - लसन्नव - पुष्प - शरेक्षु - शरासन-पाश-महांकुशे,
हर्यज शम्भु-महेश्वर-पाद-चतुष्टय-मञ्च-निवासिनि!
हंस-पदार्थ-महेश्वरि! योगि-समूह-समादृत-वैभवे,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।६।।

स

सर्व - जगत्-करणावन - नाशन-कर्त्रि, कपालि-मनोहरे,
स्वच्छ-मृणाल-मराल-तुषार-समान-सुहार-विभूषिते!
सज्जन-चित्त-विहारिणि, शङ्करि, दुर्जन-नाशन-तत्परे,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।७।।

क

कञ्ज-दलाक्षि, निरञ्जनि, कुञ्जर-गामिनि, मञ्जुल-भाषिते,
कुंकुम-पङ्क-विलेपनि, शोभित-देह-लते, त्रिपुरेश्वरि!
दिव्य-मतङ्ग-सुता-धृत-राज्य-भरे करुणा - रस - वारिधे !
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।८।।

ह

हल्लक-चम्पक-पङ्कज-केतक-पुष्प-सुगन्धित-कुन्तले,
हाटक-भूधर-शृङ्ग-विनिर्मित-सुन्दर-मन्दिर-वासिनि!

हस्ति-मुखाम्ब-वराह-मुखी-धृत-सैन्य-वरे, गिरि-कन्यके,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।९।।

ल

लक्ष्मण-सोदर-सादर-पूजित-पाद-युगे, वरदे, शिवे,
लोह-मयादि-बहून्नत-साल-निषण्ण-बुधेश्वर-संवृते!
लोल-मदालस-लोचन-निर्जित-नील-सरोज-सुमालिके,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।१०।।

ह्रीं

ह्रींमिति मन्त्र-महा-जप-सुस्थिर-साधक-मानस-हंसिके,
ह्रेषित-शीत-करानन-शोभिनि, हेम-लतेव सु-भास्वरे!
हार्द-तमो-गुण-नाशिनि पाश-विमोचनि, मोक्ष-सुख-प्रदे,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।११।।

स

सच्चिदभेद-सुखामृत-वर्षिणि, तत्त्वमसीति सदाऽऽदृते,
सद्-गुण-शालिनि, साधु-समर्चित-पाद-युगे, पर-शाम्भवि!
सर्व-जगत्-परिपालन-दीक्षित-बाहु-लता-युग-शोभिते,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।१२।।

कम्बु - गले वर-कुन्द-रदे रस - रञ्जित पाद सरोरुहे,
काम-महेश्वर-कामिनि, कोकिल-कोमल-भाषिणि भैरवि!
चिन्तित-सर्व-मनोरथ-पूरण-कल्प-लते करुणार्णवे,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।१३।।

ल

लस्तक-शोभि-करोज्ज्वल-कङ्कण-कान्ति-सुदीपित-दिङ्-मुखे,
शस्त-तर-त्रिदशालय-कार्य-समादृत-दिव्य-तनूज्ज्वले!
कश्चतुरो भुवि देवि! पुरेशि! भवानि! तव स्तवने भवेत्,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।१४।।

ह्रीं

ह्रीं-पद-लाञ्छित मन्त्र-पयोनिधि-मन्थन-जात-परामृते,
हव्य-वहानिल-भू-यजमान-खेन्दु - दिवाकर-रूपिणि!
हर्यज-रुद्र-महेश्वर-संस्तुत वैभव-शालिनि सिद्धिदे,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।१५।।

श्रीपुर-वासिनि हस्त-लसद्-वर-चामर-वाक्-कमला-नुते,
श्रीगुह-पूर्व-भवार्जित-पुण्य-फले भव-भक्त-विलासिनि !
श्रीवशिनी विमलादि सदा नत-पाद-चलन्मणि-नूपुरे,
पालय हे ललिता-परमेश्वरि! मामपराधिनमऽम्बिके ।।१६।।

पाठ-समर्पण

ॐ सर्वान्तरात्म-निलये!, स्वान्तर्ज्योतिः-स्वरूपिणि! गृहाणान्तर्पाठं मातः, श्रीललिते! नमोऽस्तु ते।।

★★★

'भगवती श्रीललिता' के आराधक एवं आराध्य मन्त्र

पूज्य बाबाश्री विरचित
मुमुक्षु मार्ग से संग्रहीत

हरि-हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं सहकलह्रीं सहकहलह्रीं सहसकलह्रीं ।

हर-हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं हसकल हसकहल सकलह्रीं।

विरञ्चि-कएईलह्रीं हकहलह्रीं हसकलह्रीं।

कहएईलह्रीं हकएईलह्रीं
सकएईलह्रीं

हसकलह्रीं सहकलह्रीं
सकहलह्रीं

सहकएईलह्रीं हसकहएईलह्रीं
सहकएईलह्रीं

हसकलह्रीं हसकसकलह्रीं
सहकहलह्रीं

हसकएईलह्रीं हसकहएईलह्रीं
सहकएईलह्रीं

कएईलह्रीं हसकहलह्रीं
सकलह्रीं

हसकलह्रीं हसकहलह्रीं
सकलह्रीं

कएईलह्रीं हकहलह्रीं
सकहलह्रीं

कएईलह्रीं हसकहलह्रीं
सहसकलह्रीं

कएईलह्रीं हसकहलह्रीं
सकलह्रीं

सएईलह्रीं सहकहलह्रीं
सकलह्रीं

कहएईलह्रीं हलएईलह्रीं
सकएईलह्रीं